तकनीकी बुलेटिन भाकृअनुप–एआईसीआरपी (एसएएस एवं यूएसडब्ल्यू)/2020/01
Technical Bulletin: ICAR-AICRP (SAS&USW)/2020/01

लवणीय जल सिंचाई द्वारा अपारंपरिक फसलों की खेती

Cultivation of Non-conventional Crops Using Saline Water for Irrigation

एस.के. चौहान, आर.एस. चौहान, पी.के. सिसोदिया, आर.बी. सिंह,
बी.एल. मीणा, आर.एल. मीणा एवं एम.जे. कलेढोणकर

भाकृअनुप–अखिल भारतीय समन्वित अनुसंधान परियोजना
लवणग्रस्त मृदाओं का प्रबंध एवं खारे जल का कृषि में उपयोग
राजा बलवंत सिंह महाविद्यालय, बिचपुरी, आगरा–283105 (उत्तर प्रदेश)

उद्धरण: चौहान एस.के., चौहान आर.एस., सिसोदिया पी.के., सिंह आर.बी., मीणा बी.एल., मीणा आर.एल. एवं कलेढोणकर एम.जे. (2020) लवणीय जल सिंचाई द्वारा अपारंपरिक फसलों की खेती। अमास्तअनुप–लवणग्रस्त मृदाओं का प्रबंध एवं खारे जल का कृषि में उपयोग, राजा बलवंत सिंह महाविद्यालय, बिचपुरी, आगरा, भारत। तकनीकी बुलेटिन: भाकृअनुप–एआईसीआरपी (एसएएस एवं यूएसडब्ल्यू) / 2020 / 01, पृष्ठ 34

Citation: Chauhan S.K., Chauhan R.S., Shishodia P.K., Singh R.B., Meena B.L., Meena R.L. and Kaledhonkar M.J. (2020). Cultivation of Non-conventional Crops Using Saline Water for Irrigation. AICRP on Management of Salt Affected Soils and Use of Saline Water in Agriculture, R.B.S. College, Bichpuri, Agra. Technical Bulletin: ICAR-AICRP (SAS&USW)/2020/01, 34 p.

प्रकाशक:
अखिल भारतीय समन्वित अनुसंधान परियोजना
"लवणग्रस्त मृदाओं का प्रबंध एवं खारे जल का कृषि में उपयोग"
राजा बलवंत सिंह महाविद्यालय, बिचपुरी, आगरा–283105 (उत्तर प्रदेश)

मुद्रक:
आरोन मीडिया
भूतल –17, सुपर मॉल, सेक्टर –12, करनाल –132001, हरियाणा
+ 91–9896433225
ईमेल : aaronmedia1@gmail.com

लवणीय जल सिंचाई द्वारा अपारंपरिक फसलों की खेती

एस॰के॰ चौहान
आर॰एस॰ चौहान
पी॰के॰ सिसोदिया
आर॰बी॰ सिंह
भाकृअनुप–अखिल भारतीय समन्वित अनुसंधान परियोजना
राजा बलवंत सिंह महाविद्यालय, बिचपुरी, आगरा (उत्तर प्रदेश)
बी॰एल॰ मीणा
आर॰एल॰ मीणा
एम॰जे॰ कलेढोणकर
भाकृअनुप–अखिल भारतीय समन्वित अनुसंधान परियोजना
भाकृअनुप–केन्द्रीय मृदा लवणता अनुसंधान संस्थान, करनाल (हरियाणा)

भाकृअनुप–अखिल भारतीय समन्वित अनुसंधान परियोजना
लवणग्रस्त मृदाओं का प्रबंध एवं खारे जल का कृषि में उपयोग
राजा बलवंत सिंह महाविद्यालय, बिचपुरी, आगरा (उत्तर प्रदेश)

प्राक्कथन

हमारे देश की लगातार बढ़ती जनसंख्या की विभिन्न जरूरतों को पूरा करने के लिए कृषि उत्पादन हेतु उपजाऊ मिट्टी एवं अच्छा जल आवश्यक है। लेकिन देश में बढ़ते हुये शहरीकरण के कारण कृषि की उपजाऊ भूमियों की उपलब्धता व साथ ही अच्छे गुणवत्ता वाले जल की कमी भी होती जा रही है। इन सारी समस्याओं को देखते हुए लवणग्रस्त एवं अनुपजाऊ भूमि को सुधार कर फसल उत्पादन के लिए लवणीय जल से सिंचाई की संभावनाएं तलाशने की आवश्यकता है।

आज हम परिवर्तन के उस मोड़ पर खड़े हैं जहाँ जीवन और समाज के सभी घटकों में वैज्ञानिक और किसान आर्थिक विकास के प्रति दृढ़ संकल्प हैं। हम ऐसे समाज की संरचना बनाने में संलग्न हैं जो किसी भी तरह की विसंगति से परे हों और जहाँ सभी को अपने सपने साकार करने के लिए समान अवसर मिल सके। इस सभी के लिए बहुत बड़े स्तर पर तकनीकी विकास व ज्ञान की आवश्यकता है। एक सभ्य एवं उन्नत समाज के लिए सरल भाषा व साहित्य ही अभिव्यक्ति का सशक्त आधार हो सकता है जिससे उच्च विचार और संवेदनाएं मूर्ति रूप में सम्प्रेषित होने से व्यक्तिगत विकास और समाज को जोड़ने के साथ प्रगति का मार्ग प्रशस्त होता है।

हम अखिल भारतीय कृषि अनुसंधान परियोजना 'लवणीय मृदाओं का प्रबंध एवं खारे जल का कृषि में उपयोग' की तरफ से कृषि के लिए नई–नई तकनीकी बनाने के लिए प्रयत्नशील हैं। हम चाहते हैं कि इन तकनीकियों की जानकारी को अपनी राजभाषा में अधिक से अधिक प्रकाशित किया जाये और किसानों तक अधिक से अधिक जानकारी उपलब्ध कराई जाये। इसी संदर्भ में हमने राजभाषा में **''लवणीय जल सिंचाई द्वारा अपारंपरिक फसलों की खेती''** तकनीकी बुलेटिन लिखने का संकल्प लिया। यह बुलेटिन कृषि वैज्ञानिकों, कृषि शोधछात्रों तथा हमारे किसान भाईयों को खारे पानी में, जहाँ पर कोई भी फसल नहीं ली जा सकती है, वहाँ पर दी गई तकनीक द्वारा नगदी फसलें उगाकर अधिक मुनाफा कमा सकते हैं।

हम इसके लिए डा॰ एस॰के॰ चौधरी, उप महानिदेशक (प्राकृतिक संसाधन प्रबंधन) भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद, नई दिल्ली व डा॰ पी॰सी॰ शर्मा, निदेशक, भाकृअनुप–केन्द्रीय मृदा लवणता अनुसंधान संस्थान, करनाल का आभार व्यक्त करते है जिन्होंने परियोजना के कार्यान्वयन व इस किसान उपयोगी बुलेटिन को प्रकाशित कराने में मार्गदर्शन प्रदान किया। इसके साथ ही हम प्राचार्य, राजा बलवंत सिंह महाविद्यालय, आगरा का आभार व्यक्त करते हैं कि उन्होंने हमें इस संदर्भ में पूर्ण सहयोग दिया। हम परियोजना के सम्पूर्ण स्टाफ को प्रदर्शन के परीक्षण तथा प्रयोगशाला कार्यों में सहयोग प्रदान करने के लिए धन्यवाद देते हैं

लेखकगण

विषय सूची

क्रम संख्या	विवरण	पृष्ठ संख्या
1	परिचय	1
2	तुलसी (*ओसीमम सेंक्टम*)	2
3	ईसबगोल (*प्लांटेगो ओवेटा*)	5
4	गैंदा (*टेगेटस इरेक्टा*)	8
5	मेथी (*ट्राइगोनेला फीनम-ग्रीकम*)	11
6	तिल (*सेसेमम इंडिकम*)	14
7	सौंफ (*फिनीकुलम वलगेयर*)	18
8	गुलाब (*रोजा डेमासीना*)	21
9	ग्वारपाठा (*एलो वेरा*)	24
10	प्याज (*एलियम सिपा*)	28
11	लहसुन (*एलियम सेटाइवम*)	31
12	उपसंहार	34

परिचय

देश के मूलभूत प्राकृतिक संसाधनों जैसे भूमि, जल, तथा जैव विविधता इत्यादि की गुणवत्ता दिनोंदिन अत्यधिक तेजी से घटती जा रही है। प्राकृतिक संसाधनों का अत्यधिक दोहन व अवैज्ञानिक कृषि पद्धतियाँ इसके प्रमुख कारण हैं। देश की खाद्यान्न एवं पोषण की सुरक्षा को स्थिर रखने के लिए कृषि अनुसंधान तथा विकास के हमारे वर्तमान दृष्टिकोण में एक बड़े बदलाव की आवश्यकता है। इसमें हमने देखा है कि पूर्व में सिंचित कृषि ने महत्वपूर्ण योगदान दिया है, लेकिन आने वाले समय में देश में सिंचाई संसाधनों के घटने के कारण इस योगदान में कमी आती जा रही है। उचित जलनिकास के बिना सिंचाई क्षेत्र का दायरा बढ़ाना, जलभराव की समस्या, लवणीयता एवं क्षारीयता जैसी मूलभूत समस्याओं को बढ़ाने में अहम कारक होगा। देश में वर्तमान समय में लवणग्रस्त क्षेत्र 6.74 मिलियन हैक्टर है तथा 2025 तक बढ़कर 11.7 मिलियन हैक्टर होने की संभावना है।

जलवायु परिवर्तन के दुष्परिणामों से खेती को बचाने के लिए संसाधनों का न्यायसंगत प्रयोग करना होगा। इसके लिए हमें भारतीय जीवन दर्शन को भलीभांति से अपनाकर पारंपरिक ज्ञान को जीवन शैली में अपनाना होगा। हमें इस समय खेती में ऐसे पर्यावरण भिन्न तरीकों को स्थान देना होगा जिनसे हम अपनी मृदा की उत्पादकता को स्थिर रख सकें तथा अपने प्राकृतिक संसाधनों को भी बचा सकें।

निम्न गुणवत्ता के भूमि जल द्वारा सिंचाई करके अपारंपरिक फसलों को उगाकर अपनी आय को बढ़ाने के साथ–साथ देश की खाद्यान समस्या का भी समाधान कर सकते हैं। अपारंपरिक फसलों में तेल वाली फसल जैसे तिल को खारे पानी में उगाकर अच्छी पैदावार ली जा सकती है। इसी प्रकार तुलसी, ईसबगोल, ग्वार पाठा जो कि आयुर्वेदिक दवाओं में प्रयोग में लाये जाते हैं, को खारे पानी की वैद्युत चालकता 8 डेसी./मीटर तक उगाकर अच्छी पैदावार ली जा सकती है। मेथी, सौंफ, प्याज व लहसुन को दवाओं में तो इस्तेमाल किया ही जाता है, साथ ही इनका भारतीय रसोई में मसाले के रूप में भी उपयोग होता है। मेथी डालकर बहुत सी सब्जियां पकाई जाती है तथा इसके दानों का पाउडर डाइबिटीज में फायदेमंद होता है। सौंफ भी मसाले के साथ–साथ उपचार तथा बच्चों के ग्राइपवाटर में इस्तेमाल होती है। लहसुन की पतियाँ कच्ची खाने से हृदय रोग में फायदा होता है तथा इसे मसाले के रूप में भी प्रयोग किया जाता है। गैंदा तथा गुलाब का उपयोग माला बनाने, सजावट करने, गुलदस्ता बनाने तथा इत्र में भी किया जाता है। गुलाब से गुलाबजल, गुलकंद व दवाओं में भी उपयोग किया जाता है।

इन सब गुणों को ध्यान में रखते हुये अपारंपरिक फसलों को लवणीय जल में उगाने के परीक्षण किये गये। परिणामों के आधार पर उपयोगी जानकारी प्रदान की जा रही है, जिसे अपनाकर किसान भूमि के कुछ भाग में इन फसलों की खेती कर अच्छी आमदनी प्राप्त कर सकते हैं।

तुलसी (*ओसिमम सेंक्टम*)

तुलसी लेमिएसी कुल का एक झाड़ीदार एवं छोटा पौधा है। भारत में इसकी कई प्रजातियाँ पाई जाती है, जिसमें से जंगली रूप में पायी जाने वाली *ओसिमम विरिडी* को छोड़कर शेष सभी प्रजातियों की खेती की जाती है। *ओसिमम सेंक्टम* प्रजाति पवित्र पौधे के रूप में घरों एवं मंदिरों में लगाई जाती है। हरे पत्तों वाली प्रजाति श्रीतुलसी (राम तुलसी) एवं बैंगनी पत्तों वाली प्रजाति कृष्ण तुलसी कहलाती है। तुलसी हिन्दू धर्म की आस्था से जुड़ी है इसलिए इसे पवित्र पौधा भी मानते हैं। इसके पत्तों, तने, जड़ एवं बीजों का उपयोग विभिन्न रोगों जैसे खाँसी, ज्वर, जुकाम, श्वास, दन्तरोग आदि के निदान हेतु किया जाता है। इसके बीजों से तेल प्राप्त किया जाता है। जिसमें कई तरह के रासायनिक तत्व जैसे युजिनॉल (71 प्रतिशत), यूजिनॉल मिथाइल ईथर (20 प्रतिशत) एवं कारवेक्राल (3 प्रतिशत) पाया जाता है। तुलसी की खेती मुख्य रूप से उत्तर प्रदेश के बरेली, बदायूं, मुरादाबाद और सीतापुर जिलों में की जाती है।

जलवायु: तुलसी की खेती उष्ण जलवायु वाले क्षेत्रों में आसानी से की जा सकती है। कम उपजाऊ जमीन जहाँ जलनिकास का उचित प्रबन्ध हो, में भी तुलसी को अच्छी तरह से उगाया जा सकता है।

भ्मृदा: दोमट एवं बलुई दोमट मृदा, जिसका पीएच मान 5 से 6 के बीच हो, जैविक पदार्थ की प्रचुर मात्रा और जलनिकास का अच्छा प्रबन्ध हो, ऐसी भूमियाँ तुलसी की खेती के लिए उपयुक्त रहती है। जंगलों में यह कंकरीली एवं पथरीली मिट्टी में भी उग आती है।

भूमि की तैयारी: एक जुताई मिट्टी पलटने वाले हल से व दो जुताई कल्टीवेटर से करके खेत को अच्छी तरह से तैयार कर लेना चाहिए। पाटा लगाना आवश्यक है ताकि खेत में मिट्टी के ढेले न रह पायें।

पौधशाला प्रबंधन: तुलसी के बीज की बुवाई उठी क्यारियों में कतारों में करनी चाहिए। पौधशाला के लिए उपजाऊ एवं अच्छे जलनिकास वाली भूमि का चयन करना चाहिए। मैदानी भागों में बीज की बुवाई अप्रैल–मई माह में की जाती है। एक हैक्टर के लिए बीज की मात्रा 200–300 ग्राम पर्याप्त रहती है। बीज को बुवाई से पहले उपचारित अवश्य कर लेना चाहिए। बीज बहुत छोटे होने के कारण बीज की गहराई 2 सेंमी. से अधिक नहीं होनी चाहिए अथवा बीज को बोने के बाद मृदा के मिश्रण से हल्का सा ढंक देना चाहिए।

पौध रोपण: जब पौध 5–6 सप्ताह की हो जाए और 4–5 पत्तियाँ निकल आये तो यह पौध रोपाई के लिए तैयार है। पौधों की रोपाई कतारों में करना चाहिए, कतार से कतार की दूरी 40–60 सेंमी. तथा पौधे से पौधे की दूरी 40 सेंमी. रखनी चाहिए।

खाद एवं उर्वरकः औषधीय पौधों में रासायनिक उर्वरकों का प्रयोग आवश्यकता होने या मृदा नमूने की जांच की सिफारिश के आधार पर करना चाहिए। रोपाई (बुवाई) से पूर्व मृदा की जांच आवश्यक है। खेत की तैयारी के समय 200 से 250 कुंटल/हैक्टर सड़ी गोबर की खाद अच्छी तरह से मिट्टी में मिला दें। नत्रजन 60 कि॰ग्रा॰ की आधी मात्रा, फॉस्फोरस 30 कि॰ग्रा॰ तथा पोटाश 30 कि॰ग्रा॰ की सम्पूर्ण मात्रा प्रति हैक्टर की दर से अंतिम जुताई के समय डाल देना चाहिए। शेष नत्रजन की आधी मात्रा पौधरोपण के 25–30 दिन बाद निराई–गुड़ाई करके दो बार में खेत में डालनी चाहिए।

सिंचाईः खेत में पौध की रोपाई के तुरन्त बाद हल्की सिंचाई कर देनी चाहिए। उचित मात्रा में उपज प्राप्त करने के लिए 5–7 दिन के अन्तराल पर लगभग 12 सिंचाईयाँ आवश्यक है।

निराई–गुड़ाईः फसल वृद्धि की प्रारंभिक अवस्था में खरपतवार शीघ्र ही निकाल देने चाहिए, अन्यथा बढ़वार पर विपरीत प्रभाव पड़ता है। फसल में निराई–गुड़ाई दो बार, पहली रोपाई के 30 दिन बाद और दूसरी 60 दिन पर करनी चाहिए। निराई–गुड़ाई से खरपतवार तो नष्ट होते ही हैं साथ ही मृदा में उचित वायु संचार भी होता रहता है।

कीट नियंत्रणः तुलसी में पत्ती मोडक एवं लेसवींग कीट का प्रकोप देखा जाता है जो पौधे की पत्तियों तथा शाखाओं को क्षतिग्रस्त करके नुकसान पहुँचाता है। इसके नियंत्रण के लिए 10,000 पी.पी.एम. सांद्रता के नीमयुक्त कीटनाशी दवा की 5 मिली. प्रति लीटर पानी का घोल बनाकर छिड़काव करें। पौधगलन एवं धब्बा रोग के लक्षण दिखाई देने पर कार्बेण्डाजिम 1.0 ग्राम दवा का प्रति लीटर पानी का घोल बनाकर छिड़काव करें।

कटाई व उपजः फसल की बुवाई के लगभग 65–70 दिनों के बाद कटाई कर लेनी चाहिए। तुलसी की औसत उपज 200 से 250 कुंटल/हैक्टर तथा तेल की मात्रा 80–100 कि॰ग्रा॰ प्रति हैक्टर तक मिल जाती है।

लवणीय जल सिंचाईः लवणीय जल का कृषि में प्रयोग परियोजना के अन्तर्गत राजा बलवन्त सिंह महाविद्यालय, बिचपुरी, आगरा के प्रक्षेत्र पर तुलसी फसल पर कई वर्षों तक परीक्षण किया गया। तालिका 1 में तुलसी पर लवणता का प्रभाव एवं लाभःलागत अनुपात देखने पर ज्ञात होता है कि लवणीय जल से तुलसी के पौधों की ऊँचाई, प्रति पौधा शाखाएं, प्रति पौधा शुद्ध भार (ग्राम) तथा सम्पूर्ण भाग की उपज सांख्यिकी दृष्टि से सार्थक थी। तुलसी के पौधों की ऊँचाई सार्थक रूप से नहरी जल सिंचाई में सबसे अधिक तथा लवणीय जल (8 डेसी./मी.) में सबसे कम पाई गई। इसी प्रकार तुलसी में अन्य कारक जैसे शाखाओं की संख्या, प्रति पौधा शुद्ध भार (ग्राम) भी तुलसी के पौधे की ऊँचाई के परिणाम की तरह थे। तालिका 1 के अवलोकन से ज्ञात होता है कि नहरी जल व वैद्युत चालकता 2 डेसी./मीटर लवणीय जल से सिंचाई करने पर हरे भाग की पैदावार लगभग एक समान प्राप्त होती है। इसी प्रकार वैद्युत चालकता 4 एवं 6 डेसी./मीटर लवणता में भी समान पैदावार प्राप्त होती है। सांख्यिकी रूप से सबसे कम पैदावार

वैद्युत चालकता 8 डेसी./मीटर लवणीय जल सिंचाई में प्राप्त होती है। तालिका 2 में आगरा एवं अलीगढ़ मंड़ल में अपारंपरिक फसलों के लिए उपयुक्त क्षेत्रों की जानकारी प्रस्तुत की गयी है।

लवणीय जल सिंचाई में तुलसी फसल का प्रदर्शन

तालिका 1. सिंचाई जल की लवणता का तुलसी की उपज पर प्रभाव

उपचार	पौधे की ऊँचाई (सेंमी.)	शाखाओं की संख्या/पौधा	शुद्ध भार पौधा (ग्राम)	सम्पूर्ण भाग की उपज (कुंटल/हैक्टर)	संबंधित उपज (प्रतिशत)	शुद्ध आय (रुपये/हैक्टर)	लाभ : लागत अनुपात
सिंचाई जल की लवणता (वैद्युत चालकता, डेसी./मीटर)							
नहरी जल	66.8	10.9	468.0	190.0	100	81,740	3.27
2	65.1	10.7	441.3	184.0	96.8	79,870	3.19
4	61.8	9.3	415.7	169.0	88.9	78,620	3.14
6	59.4	8.4	388.0	157.0	82.6	68,250	2.73
8	58.3	7.8	362.0	147.0	77.4	—	2.20
क्रांतिक अन्तर (0.05)	2.5	0.5	28.2	20.0	—	—	—

तालिका 2. आगरा एवं अलीगढ़ मंडल में अपारंपरिक फसलों के लिए उपयुक्त क्षेत्र

जनपद	विकास खण्ड़
आगरा	अछनेरा, अकोला, बाह, बरौली अहीर, बिचपुरी, एत्मादपुर, फतेहाबाद, खन्दौली, खेरागढ़, पिनाहट, सैया एवं शमशाबाद
एटा	अलीगंज, अवागढ़, जैबरा, जलेसर, मारहरा, निधौली कलां एवं शीतलपुर
कासगंज	अमांपुर, फासगंज, गंजडुण्डवारा, पटियाली, सहावर, सिद्धपुरा एवं सौरों
अलीगढ़	टकराबाद, अतरौली, बिजौली, धनीपुर, गंगीरी, इगलास, अवां एव कौल
हाथरस	मुरसान, सासनी, सिकन्दरा राइ, हसायन, सादाबाद एवं सहपुर
मैनपुरी	बसाहल, बेवर, धिरोर, करहल, किशनी, कुरावली एवं सुल्तानगंज
फिरोजाबाद	अराव, एका, फिरोजाबाद, जसराना, खैरगढ़, कोटला, मदनपुर, शिकोहाबाद एवं टूण्डला
मथुरा	बलदेव, छाता, चौमुहा, गोवर्धन, फरह एवं राया

ईसबगोल (*प्लांटेगो ओवेटा*)

ईसबगोल अपने बीजों व भूसी के कारण महत्वपूर्ण औषधीय फसल है। इसकी भूसी का उपयोग औषधि के रूप में कब्ज, पेचिश, दस्त इत्यादि अनेक पेट के विकारों में उपचार के लिए किया जाता है। भारतवर्ष में इसके बीज व भूसी का वार्षिक उत्पादन क्रमशः 13000 टन व 3200 टन होता है, जिसका 90 प्रतिशत विदेशों में निर्यात कर दिया जाता है। इस प्रकार ईसबगोल के निर्यात द्वारा भारतवर्ष का औषधीय पौधों में विदेशी मुद्रा अर्जित करने में प्रथम स्थान है।

जलवायुः भारतवर्ष में ईसबगोल की खेती सर्दियों के मौसम में की जाती है। साधारणतया ईसबगोल की खेती के लिए ठंडा व सूखा मौसम अच्छा व अनुकूल रहता है। सर्दी में वर्षा होने पर फसल में नुकसान हो जाता है।

मृदाः ईसबगोल की खेती किसी भी प्रकार की भूमि, जिसका जलनिकास अच्छा हो, में की जा सकती है। लेकिन फिर भी ईसबगोल की खेती के लिए हल्की बलुई–दोमट से उर्वर दोमट भूमि, जिसका जलनिकास अच्छा तथा भूमि का पीएच मान 7.2 से 7.9 के बीच हो, अच्छी रहती है।

भूमि की तैयारीः भूमि को एक बार डिस्क हैरो से जोतने के बाद दोबारा कल्टीवेटर से जुताई करनी चाहिए। बाद में पाटा लगाकर मिट्टी को ढेले रहित बना देना चाहिए। खेत में पानी की सुविधा के लिए 6.0 मीटर गुणा 3.0 मीटर की क्यारियां बना लेनी चाहिए जिससे कम समय में अधिक भूमि की सिंचाई हो सके।

उन्नतशील प्रजातियाँः ईसबगोल की उन्नतशील प्रजातियाँ बहुत ही कम उपलब्ध है, जिनमें गुजरात ईसबगोल–1 एवं 2 तथा एच 1–5 जो गुजरात, राजस्थान व अन्य पड़ोसी क्षेत्रों के लिए उपयुक्त है। उत्तर भारत की जलवायु की आवश्यकतानुसार केन्द्रीय औषधीय एवं सगंध पौधा संस्थान, लखनऊ द्वारा ''निहारिका'' प्रजाति विकसित की गयी है।

बीज की मात्राः ईसबगोल की छिड़कवां विधि से बुवाई करते हैं। इस विधि द्वारा बुवाई करने पर 10–12 कि॰ग्रा॰ बीज प्रति हैक्टर आवश्यक होता है।

बुवाई विधिः साधारणतया ईसबगोल की बुवाई छिड़कवां विधि से करते हैं लेकिन बुवाई कतारों में भी कर सकते है। दोनों विधियों से बुवाई करने पर उपज में ज्यादा अन्तर नहीं आता है।

बीजोपचारः बीजों से जुड़ी बीमारियों की रोकधाम के लिए टी.एम.टी.डी. (टेट्रामिथोलथ्रियम डाईसल्फाइड) अथवा कोई भी पारायुक्त दवा द्वारा 3 ग्राम/कि॰ग्रा॰ बीज की मात्रा के हिसाब से उपचारित करके बोना चाहिए।

उर्वरकः ईसबगोल की फसल को ज्यादा उर्वरकों की आवश्यकता नहीं होती है, परन्तु अच्छी फसल के उत्पादन के लिए करीब 25 कि॰ग्रा॰ नत्रजन एवं 25 कि॰ग्रा॰ फॉस्फोरस प्रति हैक्टर बोने के समय व 25 कि॰ग्रा॰ नत्रजन खड़ी फसल में समय–समय पर सिंचाई के बाद देनी चाहिए।

सिंचाईः ईसबगोल की फसल से अच्छी उपज प्राप्त करने के लिए करीब 4–5 सिंचाईयों की आवश्यकता होती है। पहली सिंचाई बीज बोने के पहले तथा दूसरी सिंचाई बीज बोने के 20–25 दिन बाद करनी चाहिए। इसके बाद आवश्यकतानुसार 30–70 दिनों पर सिंचाई करते रहना चाहिए। ईसबगोल में आखिरी महत्त्वपूर्ण सिंचाई बालियों में दूध बनने की अवस्था या बीज भरने की अवस्था में करनी चाहिए।

निराई–गुड़ाईः बुवाई के 20–25 दिनों बाद पहली निराई–गुडाई की आवश्यकता होती है। इसके बाद आवश्यकतानुसार निराई–गुड़ाई करते हैं।

बीमारियांः ईसबगोल की फसल में कई बीमारियों का प्रकोप हो सकता है जैसे– डेम्पिंग ऑफ, बिल्ट, डाउनी मिल्डयू, पाउडरी मिल्डयू एवं लीफ ब्लाइट इत्यादि। विल्ट लगने पर डाइथेन एम–45 अथवा डाइथेन जेड–78 का 2.0 से 2.5 ग्राम प्रति लीटर की दर से छिड़काव करें, पाउडरी मिल्डयू लगने की दशा में केराथान डब्ल्यू डी. का 0.2 प्रतिशत छिड़काव करना चाहिए।

फसल की कटाईः ईसबगोल की बुवाई के दो महीने बाद बालियों एवं उनके फूलों का निकलना शुरू हो जाता है तथा इसकी फसल मार्च अथवा अप्रैल में बुवाई के 120 दिन पश्चात् कटाई के लिए तैयार हो जाती है।

उपजः ईसबगोल का औसत उत्पादन लगभग 10 से 12 कुंटल प्रति हैक्टर है लेकिन खारे पानी वाले क्षेत्रों में इसकी खेती करने पर 8 से 10 कुण्टल प्रति हैक्टर तक पैदावार ली जा सकती है।

लवणीय जल सिंचाई परिणामः लवणीय जल की परियोजना, राजा बलवन्त सिंह महाविद्यालय, बिचपुरी, आगरा में तीन से चार वर्ष तक किये गये परीक्षण के परिणामों (तालिका 3) के अवलोकन से ज्ञात होता है कि ईसबगोल की फसल की लवणीय जल द्वारा सिंचाई करने पर अंकुरण प्रतिशत साख्यिकीय दृष्टि से सार्थक था। सबसे अधिक अंकुरण 76.5 प्रतिशत नहरी जल द्वारा सिंचाई में तथा सबसे कम 26.1 प्रतिशत वैद्युत चालकता 8 डेसी./मीटर की जल सिंचाई में हुआ। इसी प्रकार पौधों की लम्बाई, किल्लों की संख्या प्रति पौधा भी इन्हीं उपचारों में सबसे कम तथा सबसे अधिक पाई गई थी। ईसबगोल के बीजों एवं भूसी की उपज भी सांख्यिकीय दृष्टि से सबसे अधिक नहरी जल एवं वैद्युत चालकता 2 डेसी./मीटर की सिंचाई में 8.8 एवं 7.9 कुंटल/हैक्टर प्राप्त हुई तथा सबसे कम उपज वैद्युत चालकता 8 डेसी./मीटर में 5.8 कुंटल/हैक्टर प्राप्त हुई (तालिका 4)। अतः परिणामों से ज्ञात होता है कि ईसबगोल की फसल को वैद्युत चालकता सिंचाई जल की 8 डेसी./मीटर तक की लवणता में उगाया जा सकता है।

तालिका 3: सिंचाई जल की लवणता का ईसबगोल के वृद्धि कारकों पर प्रभाव

उपचार	अंकुरण (प्रतिशत)	बालियों की संख्या / पौधा	बाली की लम्बाई (सेंमी.)	प्रति बाली दानों की संख्या	दानों का भार प्रति बाली (ग्राम)	1000 दानों का भार (ग्राम)
जल की वैद्युत चालकता (डेसीसीमन्स / मीटर)						
नहरी जल	90.0	16.6	4.9	77.4	0.13	1.77
4	89.9	15.8	4.8	74.5	0.11	1.75
6	87.2	14.7	4.0	73.1	0.11	1.74
8	68.0	12.6	3.2	71.2	0.10	1.65
क्रांतिक अन्तर (0.05)	3.8	1.2	0.2	4.2	0.06	1.06

तालिका 4: सिंचाई जल की लवणता का ईसबगोल की उपज पर प्रभाव

उपचार	उपज / पौधा (ग्राम)		उपज (कुंटल / हैक्टर)		संबंधित उपज (प्रतिशत)	शुद्ध आय (रुपये / हैक्टर)	लाभःलागत अनुपात
	दाना	भूसी	दाना	भूसी			
जल की वैद्युत चालकता (डेसीसीमन्स / मीटर)							
नहरी जल	2.43	4.93	8.80	26.7	100	50,250	2.33
4	2.33	4.50	7.90	25.6	90	42,360	1.96
6	2.20	4.23	7.20	24.1	82	39,610	1.83
8	1.90	3.40	5.80	19.1	66	26,330	1.21
क्रांतिक अन्तर (0.05)	0.35	0.45	1.40	02.0	...	...	...

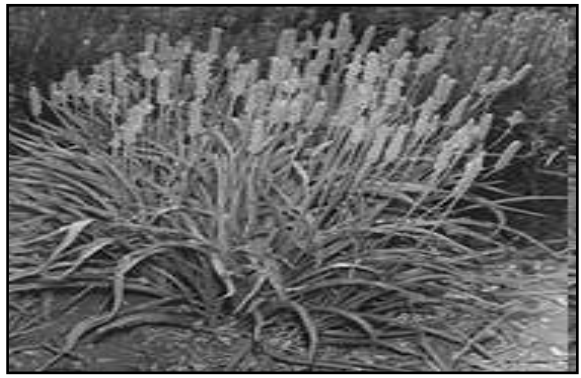

लवणीय जल सिंचाई द्वारा ईसबगोल की फसल

गैंदा (*टेगेटस इरेक्टा*)

गैंदा एक महत्त्वपूर्ण व्यवसायिक मौसमी फूल है। इसकी सुन्दरता एवं टिकाऊपन के कारण पुष्प व्यापार में गुलाब के बाद सर्वाधिक बिकने वाला फूल है। इसके फूलों का विभिन्न रूपों जैसे माला, वेणी, झालर, घर की सजावट, पूजा, गुलदस्ता बनाने आदि में व्यापक रूप से उपयोग किया जाता है। गैंदा एक आसानी से उगाया जा सकने वाला पौधा है और इस पर कीट एवं बीमारियों का प्रकोप भी बहुत कम होता है। इसकी खेती करना आर्थिक दृष्टि से लाभदायक है। गैंदा के फूल पौधों पर लम्बे समय तक खिलते रहते हैं साथ ही इसकी संग्रहण क्षमता अधिक होने के कारण आसानी से कुछ दिनों तक रखा जा सकता है। टमाटर, बैंगन, मिर्च आदि सब्जियाँ जिनमें सूत्रकृषि का प्रकोप अधिक होता है, गैंदे को मिश्रित खेती के रूप में लगाकर इसका नियंत्रण किया जा सकता है।

जलवायुः गैंदे को साल भर तीनों ही ऋतुओं में उगाया जा सकता है परन्तु पैदावार के लिए शीत ऋतु अधिक उपयुक्त है। पौधों में अच्छी बढ़वार व अधिक पुष्पन के लिए नम जलवायु की आवश्यकता होती है। अधिक तापमान पौधों की वृद्धि एवं पुष्पन को प्रभावित करता है। अधिक ठंड एवं पाला भी पौधों को नुकसान करता है तथा फूलों पर कालापन भी दिखाई देता है।

मृदाः गैंदा विभिन्न प्रकार की भूमियों में उगाया जा सकता है परन्तु गहरी उपजाऊ व भुरभुरी मिट्टी जिसकी जल धारण क्षमता अधिक हो, इसकी खेती के लिए अच्छी मानी जाती है। जिन भूमियों का पीएच मान 7.0 से 7.5 हो, में गैंदा उगाया जा सकता है। अधिक अम्लीय एवं क्षारीय भूमियों में गैंदे की वृद्धि एवं पुष्पन प्रभावित होता है।

उन्नत किस्में :

बड़े फूलों वाली (अफ्रीकन गैंदा): क्राउन ऑफ गोल्ड (पीला), जाइन्ट सन सेट (नांरगी), स्पेन येलो (पीला), एपन गोल्ड, यलो फलकी, मेला स्टोन, गोल्डन एज, औरेन्ज हवाई किस्में व्यापारिक स्तर पर फूलों के लिए उगाई जाती है।

छोटे फूलों वाली : बटर स्कोच, रेड ब्राकेट, गोल्डी, रस्टी रेडा, लेमन जेम, लेमन ड्राप, रेड चेरी, येलो वाय, हनीकारब, स्कारलेट सोफिया, क्वीन सोफिया इत्यादि।

संकर किस्में: बागवानी अनुसंधान संस्थान बैंगलोर में संकर किस्मों के विकास के लिए काफी अनुसंधान कार्य किया जा रहा है जिसके फलस्वरूप कई किस्में विकसित हुई हैं। जैसे नगेट, टेड्रा सफ्ट रेड, पूसा नांरगी गैंदा, पूसा बसंती गैंदा, ब्यूटी गोल्ड, ब्यूटी ऑरेंज, ब्यूटी यलो, गोल्डन, डायमण्ड जुबली, फर्स्ट लेडी, रॉयल यलो आदि।
भारतीय किस्में : पूसा नारंगी, पूसा बसन्ती एवं पूसा अर्पिता।

खाद एवं उर्वरकः खेत की अंतिम जुताई के समय 20–25 टन अच्छी सडी गोबर की खाद डालकर अच्छी प्रकार मिट्टी में मिला देवें। खेत में क्यारियां बनाने से पहले 125–200 कि॰ग्रा॰ यूरिया 400 कि॰ग्रा॰ सिंगल सुपर फॉस्फेट एवं 100 कि॰ग्रा॰ म्यूरेट ऑफ पोटाश को भूमि में मिला दें। इसके अलावा पौधों को खेत में रोपने के 35 से 40 दिन बाद 125 कि॰ग्रा॰ यूरिया प्रति हैक्टर खड़ी फसल में देकर हल्की सिंचाई कर दनी चाहिए।

बुवाई का समयः शीतकालीन फसल लेने के लिए बीज की बुवाई सितम्बर–अक्टूबर माह में करते हैं। ग्रीष्मकालीन फसल के लिए जनवरी–फरवरी में बीज बोया जाता है तथा वर्षाकालीन फसल के लिए बीज की बुवाई मई–जून में करते हैं। एक ऋतु में अधिक समय तक फूल लेने के लिए 15 दिन के अन्तराल से बुवाई करते हैं।

पौध तैयार करनाः मुख्य रूप से गैंदे को बीज द्वारा ही उगाया जाता है। बीजों की पौधशाला में ऊँची उठी हुई क्यारियों में 4 से 6 सेंमी. की दूरी पर कतारों में बुवाई करते हैं। बुवाई के 3 से 4 सप्ताह बाद पौध रोपाई के लिए तैयार हो जाती है। एक हैक्टर की पौध तैयार करने के लिए 1.25 से 1.50 कि॰ग्रा॰ नये बीज का उपयोग करना चाहिए।

रोपाईः पौधशाला से स्वस्थ पौधों को सावधानी से निकाल कर सांयकाल के समय खेत में रोपाई करनी चाहिए। अफ्रीकन गैंदे की रोपाई कतार से कतार की दूरी 45 से 60 सेंमी. व पौधे से पौधे की दूरी 30–45 सेंमी. पर करते हैं। फ्रेंच गैंदे की रोपाई कतार से कतार एवं पौधे से पौधे की दूरी 30 सेंमी. रखते हुए करें। रोपाई के बाद हल्की सिंचाई अवश्य करें।

पौधों को सघन बनानाः गैंदे के पौधे जैसे ही खेत में जम जायें उनका ऊपरी भाग काटकर अलग कर देना चाहिए। इससे प्रचुर मात्रा में शाखाएं निकल आती है। इससे पौधों पर फूल अधिक मात्रा में बनते हैं।

सिंचाईः गर्मियों में प्रति सप्ताह एवं सर्दी में 12 से 15 दिन के अन्तराल से सिंचाई करते हैं।

निराई–गुड़ाईः अफ्रीकन गैंदे में निराई–गुड़ाई के समय पौधों के पास मिट्टी चढ़ा देनी चाहिए ताकि पौधे गिर न सकें। खरपतवार को नहीं उगने देना चाहिए।

कीट प्रबंधनः मोयला, सफेद मक्खी, हरा तेला (जैसिड) ये कीट पौधों की पत्तियों एवं कोमल शाखाओं से रस चूसकर कमजोर कर देते हैं। इससे उपज पर प्रभाव पड़ता है। नियंत्रण के लिए मिथाइल डिटोन 25 प्रतिशत ई.सी. अथवा डाइमिथेएट 30 ई.सी. एक मिली. प्रति लीटर पानी में घोलकर दो–तीन बार छिड़काव करें।

प्रमुख बीमारियाँ

पाउडरी मिल्डयूः इस रोग में पत्तियों एवं पुष्प कलियों पर सफेद चूर्ण के धब्बे दिखाई देते हैं। नियंत्रण के लिए कैराथेन एल.सी. या कैलेक्सिन एक मिली. प्रति लीटर पानी में घोलकर 15 दिन के अन्तराल पर छिड़काव करें।

उपजः पौध रोपाई के 60 से 75 दिन बाद फूल तोड़ने योग्य हो जाते हैं। औसत रूप से 2 से 2. 5 माह तक फूल खिलते हैं। औसतन पैदावार 80 से 100 कुंटल तथा अफ्रीकन गैंदे से 180 से 200 कुंटल प्रति हैक्टर तक पैदावार मिलती है।

लवणीय जल सिंचाई के परिणामः प्रक्षेत्र परीक्षण गैंदे की फसल पर कई वर्ष तक किया गया। इसमें दो उपचार पौधों की दूरी तथा चार उपचार लवणीय जल सिंचाई (अच्छा जल, 3, 6 एवं 9 डेसी./मी.) प्रयोग में लाये गये।

पौधे से पौधे की दूरी का प्रभावः गैंदा के वृद्धि कारक क्रमशः पौधे की उँचाई, पौधे का फैलाव (सेंमी.), मुख्य तने का व्यास (सेंमी.), प्राथमिक शाखाएं/पौधा, द्वितीयक शाखाएं/पौधा (तालिका 5), उपज कारक फूल लगने का समय (दिन), फूल का व्यास (सेंमी.), फूलों की संख्या/पौधा तथा उपज (कुंटल/हैक्टर) (तालिका 6), सार्थक रूप से अधिक 50 गुणा 50 सेंमी. दूरी और सबसे कम 50 गुणा 40 सेंमी. दूरी में पाये गये। तालिका 6 के परिणामों से ज्ञात होता है कि शुद्ध आय रुपये 50,120/हैक्टर पौधे से पौधे की दूरी 50 गुणा 50 सेंमी. तथा सबसे कम रुपये 45,920/हैक्टर दूरी 50 गुणा 40 सेंमी. से प्राप्त हुई।

तालिका 5. लवणीय जल एवं पौधों की दूरी का गैंदा के वृद्धि कारकों पर प्रभाव

उपचार	पौधे की उँचाई (सेंमी.)	पौधे का फैलाव (सेंमी.)	मुख्य तने का व्यास (सेंमी.)	प्राथमिक शाखाएं/पौधा	द्वितीयक शाखाएं/पौधा
पौधों की दूरी (सेंमी.)					
50×40	73.2	41.2	2.05	14.8	10.8
50×50	70.8	47.8	2.22	16.9	9.1
क्रांतिक अन्तर (0.05)	1.6	1.7	0.08	0.6	0.5
सिंचाई जल की लवणता (डेसीसीमन्स/मीटर)					
अच्छा जल	73.5	43.8	2.04	14.9	11.1
3	72.1	42.2	2.01	14.3	9.8
6	69.1	41.3	1.69	13.2	7.9
9	62.3	37.2	1.51	10.8	6.5
क्रांतिक अन्तर (0.05)	2.4	1.9	0.07	0.9	0.4
दूरी×लवणीय जल(0.05)	नहीं	नहीं	नहीं	नहीं	नहीं

सिंचाई जल की लवणता का प्रभाव

तालिका 6 में दिये गये परिणामों से ज्ञात होता है कि उपरोक्त सभी वृद्धि कारक एवं उपज कारक सार्थक रूप से सबसे अधिक अच्छे जल द्धारा सिंचाई तथा सबसे कम वैद्युत चालकता 9 डेसी./मीटर में पाये गये। तालिका से ज्ञात होता है कि अच्छे जल उपचार में गैंदे की फसल लेने पर सबसे अधिक शुद्ध आय रुपये 51,320 तथा सबसे कम रुपये 19,040 वैद्युत चालकता 9 डेसी./मीटर में प्राप्त हुई। परिणामों के आधार पर कहा जा सकता है कि गैंदे की फसल को वैद्युत चालकता 9 डेसी./मीटर तक सिंचाई करके उगाया जा सकता है।

तालिका 6. गैंदा की उपज एवं उपज कारकों पर लवणीय जल एवं पौधों की दूरी का प्रभाव

उपचार	फूल लगने का समय (दिन)	फूल का व्यास (सेंमी.)	फूलों की संख्या/पौधा	फूलों की उपज/पौधा (ग्राम)	उपज (कुंटल/हैक्टर)	शुद्ध लाभ (रुपये/हैक्टर)	लाभःलागत अनुपात
पौधों की दूरी (सेंमी.)							
50 × 40	46.2	6.2	51.8	0.35	192.3	45,920	2.27
50 × 50	48.8	6.8	58.2	0.40	202.8	50,120	2.48
क्रांतिक अन्तर (0.05)	1.4	0.3	2.2	0.02	10.2	——	
सिंचाई जल की लवणता (डेसीसीमन्स/मीटर)							
अच्छा जल	44.2	7.2	57.1	0.40	205.8	51,320	2.54
3	43.7	7.1	56.9	0.38	204.3	50,720	2.50
6	52.2	6.1	52.7	0.33	185.2	43,080	2.13
9	56.7	3.7	30.3	0.22	125.1	19,040	1.14
क्रांतिक अन्तर (0.05)	1.6	0.7	0.8	0.03	13.5	——	——
दूरी × लवणता	नहीं	नहीं	नहीं	नहीं	नहीं	नहीं	——

मेथी (*ट्राइगोनेला फीनम–ग्रीकम*)

मेथी की खेती पूरे भारतवर्ष में की जाती है। इसकी सब्जी में केवल पत्तियों का प्रयोग किया जाता है। इसके साथ ही बीजों का प्रयोग मसाले के रूप में किया जाता है। मेथी में प्रोटीन के साथ–साथ विटामिन–सी प्रचुर मात्रा में पाया जाता है। हमारे देश में मेथी का उपयोग शाक एवं मसाले के रूप में किया जाता है। मेथी की पत्तियाँ एवं कोमल फलियाँ सब्जी के रूप में उपयोग में लाई जाती हैं। मेथी के सूखे दानों का उपयोग मसाले के रूप में, सब्जियों के छौंकनें, अचार और आयुर्वेदिक औषधियों में किया जाता है। मेथी का शाक एवं दानों का प्रयोग करने से मधुमेह रोग में फायदा मिलता है।

उत्पत्ति एवं वितरणः मेथी भारत के उत्तर–पश्चिमी भागों में काफी समय से जंगली रूप में उगती पाई गई है फिर भी इसकी उत्पत्ति पूर्वी यूरोप और इथोपिया मानी जाती है। भारत में मेथी मुख्य रूप से राजस्थान, मध्य प्रदेश, गुजरात, पंजाब एवं उत्तर प्रदेश में उगाई जाती है। देश में मेथी के कुल क्षेत्रफल का लगभग 80 प्रतिशत राजस्थान में पाया जाता है।

जलवायुः मेथी ठंडे मौसम की फसल है और यह पाले के आक्रमण को भी सहन कर लेती है। इसकी वानस्पतिक बढ़वार के लिए लम्बे समय तक ठण्डे मौसम की आवश्यकता होती है।

भूमि की तैयारीः मेथी का उत्पादन रबी की फसल के रूप में किया जाता है। अधिक वर्षा वाले स्थानों पर कम उगाई जाती है। मेथी उगाने के लिए दोमट एवं बलुई दोमट भूमियां उपयुक्त रहती है, जिनमें जल निकासी का उचित प्रबन्ध हो। मेथी की खेती के लिए मृदा का पीएच मान 6 से 7 होना चाहिए। प्रयोगों में पाया गया कि खारे पानी के क्षेत्रों में वैद्युत चालकता 4 से 6 डेसी./मीटर वाले जल से मेथी की पैदावार ली जा सकती है।

बुवाईः उत्तर भारत के मैदानी क्षेत्रों में मेथी की बुवाई का उपयुक्त समय मध्य सितम्बर से मध्य नवम्बर होता है, वैसे पत्तियों के लिए मेथी की बुवाई फरवरी में भी कर सकते हैं। पहाड़ी क्षेत्रों में इसकी बुवाई का उपयुक्त समय मार्च–अप्रैल है। लेकिन आजकल मेथी को सब्जी के लिए खरीफ ऋतु में भी उगाया जा रहा है।

उन्नत प्रजातियाँः मेथी की उन्नत प्रजातियाँ जैसे अर्ली बंचिग, कसूरी मेथी, लेह सलेक्शन–1, राजेन्द्र क्रांति, हिसार सोनाली, पंत रागिनी, एम.एच.–103, सी.ओ.–1, आर.एम.टी.–1 एवं आर.एम. टी. –143 इत्यादि हैं।

बीज की मात्राः सामान्य मेथी का 25 कि॰ग्रा॰ तथा कसूरी मेथी का 20 कि॰ग्रा॰ बीज प्रति हैक्टर पर्याप्त रहता है। लेकिन खारे जल वाले क्षेत्रों में मेथी के बीज की मात्रा 20 से 25 प्रतिशत ज्यादा बोई जानी चाहिए ताकि खेत में पर्याप्त मात्रा में पौधों की संख्या बनी रहे।

बुवाई का तरीका: मुख्य रूप से मेथी की बुवाई दो प्रकार से की जाती है :

- **छिटकवां विधि:** इस विधि में खेत को छोटी–छोटी क्यारियों में बांट लेते हैं फिर उनमें बीज को छिटक कर मिट्टी की पतली परत से ढंक देते हैं।
- **कतारों में बुवाई:** मेथी में अन्तःक्रियाएं करने तथा अधिक पैदावार लेने के लिए कतारों में बुवाई करना लाभदायक रहता है। इसमें कतार से कतार की दूरी 20 से 25 सेंमी. और पौधे से पौधे की दूरी 10 सेंमी. रखते हैं। सामान्यतः मेथी का जमाव 5–6 दिन में हो जाता है, लेकिन कसूरी मेथी का अंकुरण 7–8 दिन में होता है। बुवाई से पहले मेथी के बीज को *राइजोबियम मेलोलोटी* कल्चर से उपचारित कर लेना चाहिए।

खाद एवं उर्वरक: मेथी की बुवाई से पहले खेत में 100 से 150 कुंटल प्रति हैक्टर की दर से गोबर की खाद आखिरी जुताई पर मिट्टी में मिला देनी चाहिए। इसके अलावा 40 कि॰ग्रा॰ नत्रजन, 50 कि॰ग्रा॰ फॉस्फोरस तथा 50 कि॰ग्रा॰ पोटाश प्रति हैक्टर तत्व के रूप में देनी चाहिए। फॉस्फोरस तथा पोटाश की सम्पूर्ण मात्रा तथा नत्रजन की आधी मात्रा खेत की तैयारी के समय तथा नत्रजन की आधी मात्रा दो भागों में बांट कर छिड़काव के रूप में देनी चाहिए। प्रथम खुराक 25 से 30 दिन तथा द्वितीय खुराक 40 से 45 दिन पर खड़ी फसल में आधा–आधा करके देनी चाहिए।

सिंचाई: मेथी के उचित अंकुरण के लिए भूमि में पर्याप्त नमी होना अत्यधिक आवश्यक है। यदि खेत में नमी कम हो तो एक हल्की सिंचाई करनी चाहिए। मेथी में अन्य सिंचाईयां 7–12 दिन के अन्तराल पर करनी चाहिए।

निराई–गुड़ाई: निराई–गुड़ाई करने से उचित पैदावार प्राप्त कर सकते हैं। दूसरी सिंचाई के बाद हल्की गुड़ाई आवश्यक है जिससे पानी पर्याप्त मात्रा में मिट्टी में जाकर नमी उत्पन्न कर सके। खरपतवार नियंत्रण के लिए खेत में बुवाई से पहले फ्लूक्लोरेलिन का 0.75 कि॰ग्रा॰/हैक्टर की दर से छिड़काव आवश्यक है तथा 50 दिन के बाद एक निराई आवश्यक है।

कटाई: मेथी की बुवाई के लगभग 4 सप्ताह बाद पहली कटाई कर लेते हैं। इसमें पौधों को भूमि के निकट से काटते हैं। इसके बाद 4–6 कटाईयों के बाद उखाड़ कर गुच्छों में बांधकर बाजार में भेज देते हैं। आमतौर पर पौधों को उखाड़ते नहीं हैं बल्कि 3–4 कटाईयों के बाद पौधों को छोड़ देते हैं ताकि उनसे बीज लिया जा सके।

उपज: मेथी की फसल को केवल सब्जी के लिए उगाया जाता है तो 90 से 100 कुंटल प्रति हैक्टर उपज मिल जाती है। यदि पत्ती तथा बीज दोनों के लिए मैथी को उगाया गया है तब 2 से 3 कटाई के बाद 20 से 25 कुंटल प्रति हैक्टर पत्ती तथा 8 से 10 कुंटल प्रति हैक्टर बीज मिल जाता है। लेकिन यदि केवल बीज के लिए मेथी को उगाया जाता है तब 12 से 15 कुंटल प्रति हैक्टर तक प्राप्त होता है।

तालिका 7. सिंचाई जल की लवणता का मेथी के उपज कारक एवं उपज पर प्रभाव

उपचार	फली की लम्बाई (सेंमी.)	फली में दानों की संख्या	दाने की उपज/पौधा (ग्राम)	1000 दानों का भार (ग्राम)	उपज (कुंटल/हैक्टर)		संबंधित आय उपज (प्रतिशत)	शुद्ध आय (रुपये/हैक्टर)	लाभःलागत अनुपात
					भूसा	दाना			
सिंचाई जल की लवणता (डेसीसीमन्स/मीटर)									
नहरी जल	6.3	5.6	2.94	5.2	57.0	18.4	100	51,200	2.70
4	6.0	5.5	2.84	4.9	55.0	17.8	96	48,350	2.55
6	5.9	5.4	2.78	4.9	53.0	17.6	95	47,900	2.52
8	5.4	4.9	2.62	4.5	48.0	14.5	78	38,310	2.02
क्रांतिक अन्तर (0.05)	0.6	0.3	0.20	0.4	4.0	1.3	...	...	...

लवणीय जल सिंचाई में मेथी की उपजः लवणीय जल सिंचाई में मेथी की फसल उगाने पर कई वर्ष तक परीक्षण किया गया। परीक्षण में सिंचाई जल की वैद्युत चालकता (नहरी जल, 4, 6 एवं 8 डेसी./मीटर) थी। तालिका 7 के अवलोकन से ज्ञात होता है कि मेथी के उपज कारक जैसे फली की लम्बाई (सेंमी.), फली में दानों की संख्या, दाने की उपज/पौधा (ग्राम) इत्यादि सार्थक रूप से सबसे अधिक नहरी जल में पाये गये। साथ ही साथ वैद्युत चालकता 4 डेसी./मीटर तथा नहरी जल एवं 6 डेसी./मीटर में आपस में कोई सार्थक अन्तर नहीं था। लेकिन उपज कारकों में सबसे कम बढ़ोत्तरी, वैद्युत चालकता 8 डेसी./मीटर में दर्ज की गयी। मेथी की उपज सार्थक रूप से नहरी जल, वैद्युत चालकता 4 एवं 6 डेसी./मीटर में समान थी लेकिन सबसे कम वैद्युत चालकता 8 डेसी./मीटर से प्राप्त हुई। संबंधित उपज भी इन्हीं उपचारों में सबसे अधिक थी। तालिका 7 से ज्ञात होता है कि सबसे अधिक शुद्ध आय रुपये 51,200 नहरी जल तथा सबसे कम रुपये 38,310 वैद्युत चालकता 8 डेसी./मीटर पर प्राप्त हुई।

लवणीय जल सिंचाई द्वारा मेथी की पैदावार

तिल (*सेसेमम इंडिकम*)

तिल और तिली के तेल से सब परिचित है। रंग के हिसाब से तिल तीन प्रकार के होते हैं, श्वेत, लाल एवं काला तिल। औषधि के लिए काले तिल से प्राप्त तेल अधिक उत्तम समझा जाता है। संयुक्त राष्ट्र अमेरिका व चीन के बाद भारत विश्व का तीसरा सबसे बड़ा तिलहन उत्पादक देश है। विश्व के कुल क्षेत्रफल में भारत का 19 प्रतिशत तथा उत्पादन में 10 प्रतिशत योगदान है। तिल खरीफ की एक महत्त्वपूर्ण तिलहनी फसल है। इसकी खेती भारत में लगभग 5,000 वर्षों से की जाती रही है। तिल एक खाद्य पोषक, भोजन व खाने योग्य तेल, स्वास्थवर्धक व जैविक दवाइयों के रूप में उपयोगी है। तिल का तेल पोष्टिक, औषधीय व श्रृंगारिक प्रसाधनों व भोजन में गुणवत्ता की दृष्टि से एक महत्वपूर्ण स्थान रखता है। पर्याप्त वर्षा वाले क्षेत्रों में तिल बारानी उगाया जाता है। लेकिन उच्च तकनीक अपनाकर इसकी उपज को बढ़ाया जा सकता है।

खेत की तैयारीः तिल के लिए ऐसी भूमियों का चयन करना चाहिए जहाँ जलभराव की समस्या नहीं हो। मानसून की वर्षा होते ही एक या दो बार जुताई करके खेत को तैयार कर लेना चाहिए।

उन्नत किस्में: तिल की बहुत सी प्रजातियाँ हैं लेकिन अधिक पैदावार लेने के लिए हम निम्न किस्में उगा सकते हैं। जैसे टी.सी. 25, आर.टी. 46, आर.टी. 103, आर.टी. 125, आर.टी. 127, प्रगति (एम.टी. 175) इत्यादि।

बुवाई का समयः उत्तर भारत में तिल की बुवाई के लिए जून का अन्तिम तथा जुलाई का प्रथम सप्ताह अच्छा रहता है साथ ही यह वर्षा आने पर भी निर्भर करता है।

बीज की मात्रा एवं बुवाईः अत्यधिक शाखा वाली किस्मों के लिए 2.0–2.5 कि॰ग्रा॰ बीज प्रति हैक्टर पर्याप्त रहता है तथा अधिक शाखा वाली किस्मों में कतारों के मध्य की दूरी 35 सेंमी. तथा पौधे से पौधे की दूरी 15 सेंमी. रखते हुए बुवाई करते हैं। इसके विपरीत शाखा रहित किस्मों की बुवाई के लिए 4 से 5 कि॰ग्रा॰ बीज प्रति हैक्टर पर्याप्त रहता है तथा इसमें कतार से कतार की दूरी 30 सेंमी. तथा पौधे से पौधे की दूरी 10 से 15 सेंमी. रखते हैं।

बीज उपचारः बुवाई करने से पहले तिल के बीज को 3.0 ग्राम थायरम या कैप्टान से प्रति कि॰ग्रा॰ बीज की दर से उपचारित करना चाहिए। जीवाणु अंगमारी रोग से बचाव हेतु बीजों को 2.0 ग्राम स्ट्रेप्टोसाइक्लिन का 10 लीटर पानी में घोल बनाकर (दो घण्टे डुबोकर) बीजोपचार करना चाहिए।

कल्चर से उपचारः तिल में एजोटोबैक्टर एवं पीएसबी (फॉस्फोरस घोलक जीवाणु) का उपयोग करने से 25 प्रतिशत नत्रजन एवं फॉस्फोरस उर्वरकों की बचत की जा सकती है।

उर्वरक: जिन क्षेत्रों में सामान्य वर्षा होती है वहाँ 20 कि॰ग्रा॰ नत्रजन व 25 कि॰ग्रा॰ फॉस्फोरस की पूरी मात्रा बुवाई के समय बीज से 4–5 सेंमी. नीचे डालनी चाहिए। नत्रजन की शेष आधी मात्रा बुवाई के 4–5 सप्ताह बाद जब हल्की वर्षा हो जाये तब खेत में छिड़कवां विधि से डाल देनी चाहिए। उर्वरक देते समय निम्नलिखित बातों का ध्यान रखना चाहिए:

- जहाँ वर्षा कम होती है वहाँ पर उर्वरकों की आधी मात्रा डालें।
- फॉस्फेट उर्वरक का प्रयोग मृदा परीक्षण के आधार पर करें।
- जिन मृदाओं में जिंक की कमी है उनमें 25–30 कि॰ग्रा॰ जिंक सल्फेट बुवाई के समय डाल देना चाहिए। खड़ी फसल में जिंक की कमी होने पर 50 दिन की फसल में 0.5 प्रतिशत जिंक सल्फेट, 0.25 प्रतिशत चूने के पानी के घोल में मिलाकर छिड़काव करें।
- जहाँ तिल उगाना है उन मृदाओं में बुवाई से पूर्व 150 कि॰ग्रा॰/हैक्टर जिप्सम मिलाने से तिल की उपज तथा तेल की मात्रा बढ़ जाती है।

सिंचाई: तिल में बुवाई के बाद कम वर्षा होने पर यदि खेत में नमी कम रह गई हो तो फलियों में दाना पड़ते समय सिंचाई अवश्य करनी चाहिए।

खरपतवार नियंत्रण: फसल में खरपतवारों की रोकथाम के लिए बुवाई के एक महीने बाद निराई–गुड़ाई अवश्य करें। एलाक्लोर दाने 2 कि॰ग्रा॰/हैक्टर या 1.5 कि॰ग्रा॰/हैक्टर की दर से बुवाई पूर्व प्रयोग करें।

फसल संरक्षण: पत्ती एवं फली छेदक, गोल मक्खी, सैन्य कीट, हांक मांथ एवं फड़का का तिल की फसल में प्रकोप प्रतिवर्ष जुलाई से अक्टूबर तक रहता है। इसकी सूंड़ी, पत्तियां, फूल तथा फलियों को नुकसान पहुंचाती है। इस कीट की लटों द्वारा जाला बनाने से पौधों की कोमल पत्तियां आपस में जुड़ जाती है जिससे पौधे की बढ़वार रूक जाती है। इनके नियंत्रण के लिए क्यूनॉलफॉस 25 ई.सी. 1–1.5 लीटर या कारबोरिल 50 प्रतिशत चूर्ण, 2 कि॰ग्रा॰/हैक्टर की दर से प्रकोप दिखाई देते ही छिड़काव करें। जरूरत पड़ने पर 15 दिन बाद पुनः छिड़काव करें। हांक मांथ, फड़का एवं गोल मक्खी की रोकथाम के लिए मैन्कोजैब या जाइनेब 1.5 कि॰ग्रा॰ या कैप्टान 2–2.5 कि॰ग्रा॰ फफूंदीनाशी का प्रति हैक्टर 15 दिन के अन्तराल पर छिड़काव करें।

झुलसा एवं अंगमारी: इस रोग का प्रारम्भ छोटे–छोटे भूरे रंग के धब्बों से फलियों पर होता है। बाद में ये बड़े होकर पत्तियों को झुलसा देते हैं तथा तने पर इसका प्रभाव भूरी धारियों के रूप में दिखाई देता है। रोकथाम के लिए मैन्कोजेब या जाइनेब 1.5 कि॰ग्रा॰ या कैप्टान 2–2.5 कि॰ग्रा॰ फफूंदनाशी का प्रति हैक्टर की दर से 15 दिन के अन्तराल पर छिड़काव करें।

छाछया रोग: सितम्बर महीने में पत्तियों की सतह पर सफेद पाउडर जैसा जमा हो जाता है। अधिक प्रकोप होने पर पत्तियां पीली पड़ कर सूखने लगती है तथा झड़ जाती है। लक्षण दिखाई देते ही 20 कि॰ग्रा॰ गंधक चूर्ण प्रति हैक्टर की दर से छिड़काव करें।

जड़ व तना गलनः रोगी पौधों की जड़ व तना भूरे रंग का हो जाता है। रोगी पौधों का तना, पत्तियों एवं फलियों पर छोटे–छोटे काले दाने दिखाई देते हैं। रोगी पौधे जल्दी पक जाते हैं। रोकथाम के लिए तिल बोने से पूर्व बीज को 3 ग्राम प्रति किलोग्राम बीज थायरम या कैप्टान से उपचारित कर बोना चाहिए।

कटाईः तिल की कटाई का समय बहुत महत्त्वपूर्ण है क्योंकि देरी होने पर दाने झड़ने लगते हैं। जब पौधे पीले पड़ जाये तो समझ लेना चाहिए कि फसल पक गई है। कटाई करके बंडल बांध कर सीधा खड़ा कर दें। पूरी पैदावार लेने के लिए इन बंडलों की दो बार झड़ाई करें।

लवणीय सिंचाई जल के परिणामः तिल पर लवणीय जल सिंचाई का परीक्षण कई वर्षों तक किया गया। इस परीक्षण में सिंचाई जल के चार उपचार क्रमशः नहरी जल 4, 6 एवं 8 डेसी./मीटर सिंचाई में प्रयोग किया गया। तालिका 8 का अवलोकन करने पर ज्ञात होता है कि तिल के उपज कारक जैसे कैप्सूल की संख्या प्रति पौधा, कैप्सूल में दानों की संख्या तथा 1000 दानों का भार (ग्राम) सार्थक रूप से नहरी जल, वैधुत चालकता 4 एवं 6 डेसी./मीटर पर आपस में समान थे। लेकिन सार्थक रूप से सबसे कम वैद्युत चालकता 8 डेसी./मीटर में पाये गये। इसी प्रकार तिल के बीज की पैदावार सार्थक रूप में सबसे अधिक नहरी जल 4 एवं 6 डेसी./मीटर में थी तथा सबसे कम 8 डेसी./मीटर से प्राप्त हुई। संबंधित उपज भी इन्हीं उपचारों में अधिक थी। तिल की फसल से सबसे अधिक शुद्ध आय रुपये 88,200/हैक्टर नहरी जल उपचार तथा सबसे कम रुपये 55,850/हैक्टर लवणीय जल 8 डेसी./मीटर से प्राप्त हुई। परिणामों के आधार पर हम कह सकते हैं कि खारे पानी वाले क्षेत्रों में 8 डेसी./मीटर लवणता तक तिल की खेती सफलतापूर्वक कर सकते हैं।

तालिका 8. सिंचाई जल की गुणवत्ता का तिल की पैदावार पर प्रभाव

उपचार	प्रति पौधा कैप्सूल की संख्या	कैप्सूल में दानों की संख्या	1000 दानों का भार (ग्राम)	उपज (कुंटल/हैक्टर)		संबंधित उपज (प्रतिशत)	शुद्ध आय (रुपये/हैक्टर)	लाभः लागत अनुपात
				डंठल	दाना			
सिंचाई जल की लवणता (डेसीसीमन्स/मीटर)								
नहरी जल	47.9	59.4	3.83	31.7	15.7	100	88,200	3.68
4	46.8	58.9	3.73	30.9	14.2	90	79,600	3.32
6	46.4	56.8	3.68	30.4	14.1	89	79,300	3.30
8	41.4	52.6	3.20	26.0	11.1	60	55,850	2.33
क्रांतिक अन्तर (0.05)	1.6	3.5	0.20	1.8	1.8	....	....	....

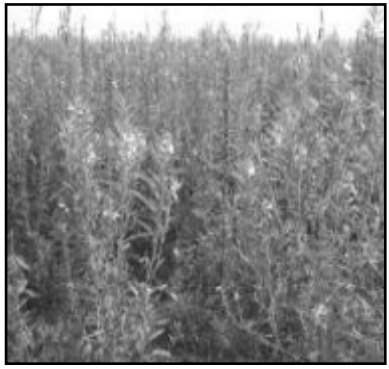

नहरी सिंचाई जल

सिंचाई जल की लवणता 4 डेसी./मीटर

सिंचाई जल की लवणता 6 डेसी./मीटर

सिंचाई जल की लवणता 8 डेसी./मीटर

प्रक्षेत्र परीक्षण में तिल की फसल पर लवणीय जल स्तरों का प्रभाव

सौंफ (*फीनिकुलम वलगेयर*)

सौंफ मसाले की एक प्रमुख फसल है। इसका उपयोग औषधि, अचार, चटनी, मुरब्बा आदि में किया जाता है। आयुर्वेद में सौंफ एक विशेष स्थान रखती है, इसका प्रयोग अतिसार, खूनी पेचिस, कब्ज, नजला तथा मस्तिष्क की कमजोरी जैसी बीमारियों में किया जाता है। भारत में कुल 54290 हैक्टर में सौंफ की खेती की जाती है। इसमें राजस्थान व उत्तर प्रदेश प्रमुख हैं।

जलवायुः सौंफ शरद ऋतु में बोई जाने वाली फसल है। लेकिन सौंफ में फूल आने के समय पाला पड़ने से उपज प्रभावित होती है। शुष्क एवं सामान्य ठण्डा मौसम विशेषकर जनवरी से मार्च तक इसकी उपज व गुणवत्ता के लिए बहुत लाभदायक रहता है। फूल आते समय अधिक बादल या नमी से बीमारियों को बढ़ावा मिलता है।

भूमि एवं खेत की तैयारीः सौंफ की बुवाई दोमट मृदा को छोड़कर प्रायः सभी प्रकार की भूमि, जिसमें जीवांश पर्याप्त मात्रा में हो व उचित जलनिकास वाली दोमट व काली मिट्टी अच्छी रहती है। अच्छी तरह से जुताई करके 15–20 सेंमी. गहराई तक खेत की मिट्टी को भुरभुरी बना लेना चाहिए। पर्याप्त नमी के लिए बुवाई पूर्व सिंचाई (पलेवा) आवश्यक है।

उन्नत किस्में: आर.एफ. 101, आर.एफ. 125, आर.एफ. 143 इत्यादि।

बीज की मात्रा एवं बुवाईः सौंफ की बुवाई के लिए 8–10 कि॰ग्रा॰ स्वस्थ बीज प्रति हैक्टर पर्याप्त रहता है। बुवाई अधिकतर छिड़कवां विधि से की जाती है तथा निर्धारित बीज की मात्रा एक समान छिड़क कर हल्का पाटा लगा देते हैं। लेकिन सौंफ की बुवाई रोपण विधि द्वारा या सीधे कतारों में भी की जाती है। सीधी बुवाई के लिए 8–10 कि॰ग्रा॰ बीज एवं रोपण विधि से बुवाई के लिए जुलाई–अगस्त में 100 वर्ग मीटर क्षेत्र में पौधशाला तैयार की जाती है। उसके बाद सितम्बर के महीने में रोपण किया जाता है। इसकी बुवाई मध्य सितम्बर से मध्य अक्टूबर तक की जाती है। बुवाई 40–50 सेंमी. की दूरी पर कतारों में हल के पीछे कूड़ में 2–3 सेंमी. की गहराई पर की जाती है। पौध को पौधशाला से सावधानी से उठाना चाहिए जिससे जड़ों को नुकसान न हो। रोपण दोपहर के बाद जब गर्मी कम हो, की जाती है तथा रोपण के तुरन्त बाद सिंचाई आवश्यक है। सीधी बुवाई में 7–8 दिन के बाद दूसरी हल्की सिंचाई करते हैं जिससे पूर्णरूप से अंकुरण हो सके। पौधशाला से खेत में रोपण के लिए संयुक्त कतारें 120 सेंमी. की दूरी पर रोपें व दो संयुक्त कतारों के बीच 210 सेंमी. का अन्तराल रखें। पौधे से पौधे की दूरी 25 सेंमी. रखें।

बीजोपचारः सौंफ के बीज को 2 ग्राम कार्बेन्डाजिम प्रति किलोग्रम बीज की दर से उपचारित करके बोयें।

खाद एवं उर्वरकः सौंफ की फसल की अच्छी बढ़वार के लिए भूमि में पर्याप्त मात्रा में जैविक पदार्थ का होना आवश्यक है। यदि इसकी उपयुक्त मात्रा मिट्टी में न हो, तो 10 से 15 टन/हैक्टर अच्छी तरह से सडी हुई गोबर की खाद खेत की तैयारी से पहले ड़ाल देनी चाहिए।

इसके अलावा 90 किलोग्राम नत्रजन तथा 40 किलोग्राम फॉस्फोरस प्रति हैक्टर की दर से देना चाहिए। 30 किलोग्राम नत्रजन एवं फॉस्फोरस की पूरी मात्रा खेत की अन्तिम जुताई के समय छिड़क कर मिला देनी चाहिए। शेष बची नत्रजन को दो भागों में बांटकर 45 दिन तथा फूल आने के समय देना चाहिए।

सिंचाईः सौंफ की फसल को अधिक सिंचाई की आवश्यकता होती है। बुवाई के समय यदि खेत में नमी कम हो तो बुवाई के तीन–चार दिन बाद हल्की सिंचाई करनी चाहिए जिससे बीज का जमाव उचित मात्रा में हो सके। सिंचाई करते समय ध्यान रखना चाहिए कि पानी का बहाव तेज न हो अन्यथा बीज बहकर किनारे पर एकत्रित हो जायेंगे। दूसरी सिंचाई बुवाई के 12 से 15 दिन बाद करनी चाहिए जिससे बीजों का अंकुरण पूर्ण हो जाए। इसके बाद सर्दियों में 15 से 20 दिन के अन्तराल पर सिंचाई करनी चाहिए। सौंफ में फूल आने के बाद सिंचाई जल की कमी नहीं होनी चाहिए।

निराई–गुड़ाईः सौंफ के पौधे जब 8 से 10 सेंमी. के हो जाए तब गुड़ाई करके खरपतवार निकाल देने चाहिए। गुड़ाई करते समय यह ध्यान रखा जाए कि जहाँ बहुत से पौधे एक जगह पर हों उनमें से कमजोर पौधों को निकालकर पौधों की संख्या उपयुक्त रखनी चाहिए। इसके बाद आवश्यकतानुसार खरपतवार निकालते रहें। फूल आने के बाद गुड़ाई करते समय पौधों के पास मिट्टी चढ़ा दें जिससे पौधे हवा द्वारा गिर न सकें।

लवणीय जल सिंचाई में सौंफ की फसल

कीट एवं नियंत्रण

मोयला, पर्णजीवी एवं मकड़ीः मोयला पौधों के कोमल भाग से रस चूसता है तथा फसल को काफी नुकसान पहुंचाता है। मोयला कीट बहुत छोटे आकार का होता है। यह कोमल एवं नई पत्तियों से हरा पदार्थ खुरच कर खाता है जिससे पत्तियों पर धब्बे दिखाई देने लगते हैं, और पत्ते पीले पड़कर सूख जाते हैं। इसके नियंत्रण के लिए डाईमिथोएट 30 ई.सी. या मैलाथियान 50 ई.सी. एक मिली प्रति लीटर पानी में घोलकर छिड़काव करें। आवश्यक होने पर 15 दिन बाद पुनः छिड़काव करें।

बीमारियाँ

पाउडरी मिल्डयूः रोग होने पर पत्तियों व टहनियों पर सफेद चूर्ण दिखाई देता है। बाद में यह पूरे पौधे पर फैल जाता है। नियंत्रण के लिए 20–25 कि॰ग्रा॰ गंधक के चूर्ण का बुरकाव करें।

जड़ व तना गलनः इस रोग के प्रभाव से तना नीचे से मुलायम हो जाता है व जड़ गल जाती है। नियंत्रण हेतु कार्बेन्डाजिम 2 ग्राम प्रति लीटर बीज की दर से बीजोपचार करके बोयें।

कटाईः सौंफ के दाने गुच्छे में आते हैं व पौधों पर सब गुच्छे एक साथ नहीं पकते। अतः कटाई एक साथ नहीं हो सकती है। जैसे ही दानों का रंग हरे से पीला होने लगे गुच्छों को तोड़ लेना चाहिए। अच्छी पैदावार के लिए बीजों को अधिक पीला नहीं पड़ने देना चाहिए।

उपजः उन्नत तकनीक से खेती करने पर 10 से 15 कुंटल/हैक्टर पैदावार ली जा सकती है।

लवणीय जल सिंचाई के परिणामः सौंफ पर कई वर्षों तक विभिन्न लवणीय जल उपचार पर परीक्षण किया गया। तालिका 9 के अवलोकन से ज्ञात होता है कि सौंफ के विभिन्न उपज कारक सिंचाई जल उपचार में सार्थक थे। विभिन्न कारक पौधे की ऊँचाई (सेंमी.), क्षत्रपों की संख्या/पौधा, बीजों की संख्या/क्षत्रप, दानों का भार/क्षत्रप (ग्राम), फूलों की संख्या/क्षत्रप, बीजों की संख्या/फूल, 1000 दानों का भार (ग्राम), सार्थक रूप से सबसे अधिक नहरी जल सिंचाई में तथा सबसे कम सिंचाई जल लवणता 8 डेसी./मी. में थे। सौंफ की उपज कुंटल/हैक्टर सार्थक रूप से सबसे अधिक नहरी जल में 11.7 कुंटल/हैक्टर तथा सबसे कम वैद्युत चालकता 8 डेसी./मीटर में 9.2 कुंटल/हैक्टर प्राप्त हुई, इसी प्रकार शुद्ध आय सबसे अधिक रुपये 58,700 नहरी जल तथा सबसे कम रुपये 38,750 लवणीय जल (वैद्युत चालकता 8 डेसी./मी) से प्राप्त हुई (तालिका 10)। अतः कह सकते हैं कि लवणीय जल में थोड़ी कम उपज के साथ सौंफ की खेती 8 डेसी./मीटर तक के लवणीय सिंचाई जल द्वारा कर सकते हैं।

तालिका 9. लवणीय जल की गुणवत्ता का सौंफ के उपज कारकों पर प्रभाव

उपचार	पौधे की ऊँचाई (सेंमी.)	क्षत्रपों की संख्या/पौधा	बीजों की संख्या/ क्षत्रप	दानों का भार/क्षत्रप (ग्राम)
सिंचाई जल की लवणता (डेसीसीमन्स/मीटर)				
नहरी जल	136.3	24.4	520.7	3.18
4	135.8	23.4	510.0	3.04
6	135.2	23.4	507.0	3.01
8	125.6	20.9	481.7	2.88
क्रांतिक अन्तर (0.05)	3.5	1.7	7.2	0.21

तालिका 10. लवणीय जल सिंचाई का सौंफ के उपज कारक एवं उपज पर प्रभाव

उपचार	फूलों की संख्या/ क्षत्रप	बीजों की संख्या/ फूल	1000 दानों का भार (ग्राम)	उपज (कुंटल/हैक्टर)		संबंधित उपज (प्रतिशत)	शुद्ध आय (रुपये/हैक्टर)	लाभः लागत अनुपात
				डंठल	दाना			
सिंचाई जल की लवणता (डेसीसीमन्स/मीटर)								
नहरी जल	26.0	23.9	3.06	55.2	11.7	100	58,700	3.33
4	24.9	23.6	6.01	54.1	10.3	63	55,800	3.17
6	24.2	23.4	6.01	54.1	10.3	86	54,950	3.11
8	21.8	21.5	5.92	46.7	9.2	73	38,750	2.20
क्रांतिक अन्तर (0.05)	0.3	1.0	0.28	12.3	4.7	...	...	

गुलाब (*रोजा डेमासीना*)

गुलाब विश्व का सर्वाधिक लोकप्रिय पुष्प है इसलिए इसे फूलों का राजा भी कहा जाता है। यह झाड़ीनुमा एक बहुवर्षीय पौधा है जो सुन्दर पुष्पों के लिए उगाया जाता है। इसके फल को हिप कहते हैं जो विटामिन सी का अच्छा स्त्रोत है। इसके फूल से जैम, जैली व मालाएं बनाई जाती हैं। गुलाब के फूलों से मुख्यरूप से इत्र निकाला जाता है तथा इसके लिए चेली गुलाब का सर्वाधिक प्रयोग किया जाता है। गुलाब के 3–4 टन फूलों से लगभग 1 लीटर गुलाब का तेल प्राप्त किया जा सकता है। इत्र के अलावा गुलाबजल, गुलकंद, पंखुडी, गुल रोगन, शरबत इत्यादि उत्पाद गुलाब के फूलों से बनाये जाते हैं।

देश में सुगंधित गुलाब का उपयोग मुख्यतः माला, कट फ्लावर, गुलदस्ता, मंदिर व अन्य धार्मिक और शुभ अवसरों पर किया जाता है वहीं पर वर्तमान में सौन्दर्य प्रसाधनों की मांग बढ़ने के साथ गुलाब तेल का वार्षिक उत्पादन लगभग 18–20 टन है, जबकि इसकी मांग कई गुना अधिक है।

भारत में गुलाब का उत्पादन मुख्यरूप से हिमाचल प्रदेश, चंडीगढ़, दिल्ली, लखनऊ (उत्तर प्रदेश), पुणे, नासिक (महाराष्ट्र), बंगलौर (कर्नाटक), कोयम्बटूर (तमिलनाडू), पश्चिम बंगाल के कुछ क्षेत्रों मुख्यतः कोलकाता में किया जाता है। राजस्थान में इसका उत्पादन मुख्य रूप से पुष्कर, हल्दीघाटी, श्रीगंगानगर व उदयपुर में किया जाता है। गुलाब की खेती काफी अधिक लाभदायक एवं सुगमता से की जा सकने वाली खेती है।

भूमि एवं जलवायुः गुलाब की खेती के लिए दोमट तथा अधिक कार्बनिक पदार्थ वाली मिट्टी होनी चाहिए जिसका पीएच मान 6 से 7.5 तक हो। गुलाब की खेती के लिए अधिक सर्दी व अधिक गर्मी नहीं होनी चाहिए अर्थात् दिन का तापमान 25–30 डिग्री सेल्सियस तथा रात का 12–14 डिग्री सेल्सियस अति उत्तम माना जाता है।

प्रजातियाँ

संकरः क्रिसयन, ग्लोरी, मिस्टर, लिंकन, लव, जान एफ कनेडी, जवाहर, मृणालिनी, प्रेसीडेन्ट, राधाकृष्णन, फर्स्ट लव, अपोलो, पूसा, सीनिया, गंगा, आक सेटनरी।

पालीएथाः अजनी, रश्मि, नर्तकी, प्रति स्वामी।

फ्लोरीवडाः बंजारन, देहली, पिंसेज, डिम्बल, चन्द्रमा, सदावहार, सोनीरा, नीलाम्बरी, करिश्मा, सूर्यकिरण।

जैन्डीफ्लोरा : क्वीन एलिजाबेथ, मान्टेजुमा।

मिनीयेचरः ब्यूटी सीक्रेट, रेडफ्लश, पुश्कला, बेबी गोल्ड स्टार, सिल्वर टिप्पस।

विदेशी बाजार में प्रचलित गुलाब की किस्में :

लाल फूल वाली किस्मेंः फर्स्ट रेड, ग्राण्डगाला, कैरामिया, ऐसकेड, रेफिला, बेरोक्स, बेन्डी, पेसन।

गुंलाबी रंग की किस्मेंः कीस, मेलाडी, सोनिया, विवाल्डी, पीस, एस्ट्रा, कोनकेटी।

पौध तैयार करना: जंगली गुलाब के ऊपर 'टी' बडिंग द्वारा इसकी पौध तैयार की जाती है। जंगली गुलाब की कलम जून–जुलाई में क्यारियों में लगभग 15 सेंमी. की दूरी पर लगा दी जाती है, इनमें पत्तियां फूट आती है। नवम्बर–दिसम्बर में चाकू की सहायता से फुटाव आई टहनियों पर से कांटे साफ कर दिये जाते हैं। जनवरी में अच्छी किस्म के गुलाब से टहनी लेकर 'टी' आकार की कलिका निकाल कर जंगली गुलाब के ऊपर लगाकर पोलीथिन से कसकर बांध देते हैं। तापमान के साथ इनमें फुटाव आ जाता है और जुलाई–अगस्त में पौध रोपने के लिए तैयार हो जाती है।

ले आउट तैयार करना: सुन्दरता की दृष्टि से औपचारिक ले आउट करके 5 गुणा 2 वर्ग मीटर क्यारियां तैयार की जाती है। दो क्यारियों के बीच में आधा मीटर का स्थान छोड़ना चाहिए ताकि कृषि क्रियाएं करने में बाधा न आए। क्यारियों को अप्रैल–मई महीने में एक मीटर की गहराई तक खोदें और 15–20 दिन तक खुला छोड़ दें। क्यारियों में 30 सेंमी. तक सूखी पत्तियां डालकर खोदी गई मिट्टी से क्यारियों को भर दें। इसके बाद क्यारियों को पानी से भर दें। दीमक से बचाने के लिए पेराथियान 2 प्रतिशत धूल या कार्बोफ्यूरान 3 जी. का प्रयोग करें। लगभग 10–15 दिन बाद ओट आने पर इन्हीं क्यारियों में कतार बनाते हुए पौधे की दूरी 30 सेंमी व कतार की दूरी 60 सेंमी. रखी जाती है।

पौध रोपण: पौधशाला से सावधानी से पौध खोदकर उत्तर भारत के मैदानी भागों में सितम्बर–अक्टूबर में पौध की रोपाई करनी चाहिए। खोदे गये पिण्डी से लिपटी घास–फूंस हटा दें और ध्यान रखें कि कलिकायन वाला भाग रोपाई के समय भूमि की सतह से 15 सेंमी. ऊँचा रहे। पौध लगाने के बाद सिंचाई कर दें।

सिंचाई: गुलाब की खेती के लिए सिंचाई का उचित प्रबन्ध होना चाहिए और आवश्यकतानुसार गर्मी में 5–7 दिन और सर्दी में 10–12 दिन के अंतराल पर सिंचाई करनी चाहिए।

कटाई–छंटाई: कटाई–छंटाई के लिए मैदानी भागों में अक्टूबर महीने का दूसरा सप्ताह उपयुक्त रहता है, बशर्ते इस समय वर्षा न हो। पौधों में 3–5 मुख्य टहनियों को 30–45 सेंमी. लम्बी रखकर काट दिया जाता है। जहाँ पर काटा जाए वहाँ आँख बाहर की तरफ हो, इस बात का ध्यान रखना चाहिए। काट–छांट तेज चाकू अथवा सिकेटियर से करनी चाहिए। कटे भाग पर कवकनाशी दवाइयों, कॉपर आक्सीक्लोराइड अथवा बोरडेक्स मिश्रण का लेप कर देना चाहिए।

खाद एवं उर्वरक: गुलाब के पौधों के विकास के लिए सर्दियों के दिनों में 3–4 घंटे की धूप और रात्रि की ओस बहुत आवश्यक है। उत्तम कोटि का फूल लेने के लिए (काट–छांट के बाद) प्रति पौधा 10 कि॰ग्रा॰ गोबर की सड़ी खाद मिट्टी में मिलाकर सिंचाई करनी चाहिए। गोबर की खाद के एक सप्ताह बाद पौधों में नई कोपलें फूटने लगे तब 200 ग्राम नीम की खली, 100 ग्राम हड्डी का चूरा तथा रासायनिक खाद का मिश्रण 50 ग्राम प्रति पौधा जिसमें यूरिया, सुपर फॉस्फेट तथा पोटेशियम सल्फेट 1:2:1 का अनुपात डाल दें।

फूलों की कटाईः सफेद, लाल, गुलाबी रंग के फूल अधखुली पंखुड़ियों में जब इसकी पंखुड़ी नीचे की ओर मुड़ना शुरू हो तब काटना ठीक रहता है। फूलों को काटते समय एक या दो पत्तियां रहने पर छोड़ देनी चाहिए जिससे पौधा वहाँ से पुनः बढ़वार कर सके।

बीमारियाँ

काला धब्बाः रोगग्रसित पत्तियों के दोनों सतह पर गोल काले धब्बे दिखाई देते हैं यह धब्बे धीरे–धीरे बड़े हो जाते हैं और पत्तियां पीली पड़कर गिर जाती है। ग्रसित पौधों पर डाइथेन जेड–78 अथवा डाडथेन एम–45, 2 ग्राम प्रति लीटर की दर से पानी के साथ कटाई–छंटाई के बाद 15 दिन के अन्तराल 3–4 छिड़काव करें।

चूर्णी फफूंदः इस रोग में पत्तियों के किनारे जुड़ जाते हैं और पत्तियां, तना तथा कलियों पर सफेद व भूरे धब्बे बन जाते हैं इस बीमारी में सफेद आटे के समान पाउडर तेजी से पत्तियों पर फैल जाता है। केराथिन 2–3 मिली./10 लीटर पानी का छिड़काव करें। बोरेडेक्स मिश्रण का छिड़काव करें।

रोयेंदार सूंड़ीः सूंड़ी का लार्वा पत्तियों, कोमल टहनियों को काट कर खा जाता है। लार्वा एकत्रित करके नष्ट कर दें। 0.05 प्रतिशत मिथाइल पेराथियान का छिड़काव करें।

गुलाब का स्केलः पत्तियों का रस चूसते हैं जिससे पौधा कमजोर होकर मर जाता है। 0.04 प्रतिशत मोनोक्रोटोफॉस का छिड़काव करें।

सफेद मक्खीः यह कीट पत्तियों के निचले भाग पर पाया जाता है तथा तना, पत्तियों का रस चूसता है। पौधों की बढ़वार रूक जाती है। मिथाइल डाइमेथान 0.05 प्रतिशत मोनोक्रोटोफॉस 0.04 प्रतिशत अथवा नीम का तेल 2.0 प्रतिशत का छिड़काव करें।

गुलाब का चेपाः निम्फ हजारों की संख्या में पत्तियों, तनों पर चिपक कर रस चूसते हैं। पत्तियां ऊपर की ओर मुड़ जाती है। पौधा बीमार दिखने लगता है। 0.06 प्रतिशत रोगोर का छिड़काव करना चाहिए।

प्रक्षेत्र परीक्षण में गुलाब

ग्वार पाठा (*एलो वेरा*)

ग्वार पाठा (घृतकुमारी) प्याज कुल का पौधा है, जिसका वैज्ञानिक नाम *एलो वेरा* है। विश्व में इसके लगभग 200 कुल पाये जाते हैं। उनमें घृतकुमारी सबसे उपयोगी पौधा है। इसका औषधीय एवं सौन्दर्य प्रसाधनों में बहुत ही महत्त्व है। इसका उपयोग जलने, खून विकार, त्वचा की बीमारियों, लाल आँखों के उपचार, पेचिश, बालों की रूसी इत्यादि में किया जाता है। इसकी खेती उत्तर प्रदेश, मध्य प्रदेश व राजस्थान के कुछ सीमित क्षेत्रों में की जाती है। वर्तमान तथा भविष्य में इसकी दिन प्रतिदिन बढ़ती मांग के कारण यह आवश्यक हो गया है कि बड़े पैमाने पर *ऐलो वेरा* की खेती करके उत्पादन बढ़ाया जाये। जिससे देश की मांग पूरा करने के पश्चात् इसका निर्यात भी किया जा सके, और हमेशा प्रचुर मात्रा व उचित मूल्य पर आपूर्ति भी होती रहे। इसकी उन्नत खेती करके ही इस लक्ष्य को प्राप्त किया जा सकता है।

जलवायुः ग्वार पाठा की खेती के लिए गर्म व शुष्क जलवायु अच्छी व अनुकूल रहती है। सर्दियों में कोहरा इसे नुकसान पहुंचाता है।

भूमिः ग्वार पाठा की खेती किसी भी प्रकार की भूमि जिसका जलनिकास अच्छा हो, वहाँ की जा सकती है, लेकिन इसकी अच्छी खेती के लिए मोटी अथवा हल्की बलुई–दोमट भूमि उपयुक्त है। जिन भूमियों का पीएच मान 6.5 से 8.5 हो, अच्छी रहती है। पीएच मान 9.5 तथा अधिशोषण सोडियम प्रतिशत (ई.एस.पी.) 30 से 40 वाली मिट्टी में भी इसे उगाया जा सकता है।

भूमि की तैयारीः पहली जुताई डिस्क हैरो द्वारा करनी चाहिए जिससे खेत में खड़े खरपतवार कट कर नष्ट हो जायें। इसके बाद एक या दो जुताई कल्टीवेटर से करने के बाद पाटा लगा देना चाहिए ताकि मिट्टी के ढेले टूट जायें। खेत में सुविधानुसार क्यारियां बनाकर उनमें 50 गुणा 50 सेंमी. में मेड़ बना लेनी चाहिए जिन पर पौधों की रोपाई आसानी से की जा सके।

प्रजातियाँ : मुख्यरूप से ए.एल.–1 (आकांक्षा) प्रजाति को बड़े पैमाने पर उगाया जाता है।

रोपाई का समयः ग्वार पाठा को साल में किसी भी समय लगाया जा सकता है, लेकिन फिर भी इसकी रोपाई का उचित समय वर्षा के बाद अगस्त का अन्तिम सप्ताह है।

पौध की तैयारी तथा रोपाई : ग्वार पाठा की पौध जड़ों अथवा कल्लों, जिसमें जड़ें बन गई हों, तैयार की जाती है। इसके लिए स्वस्थ पौधे से उनके कल्ले कलम करके अथवा संकर द्वारा तैयार होता है। यदि पौध 50 गुणा 40 सेंमी. पर लगाई जाये तो लगभग 60,000 से 65,000 कल्लों की आवश्यकता पड़ती है। स्वस्थ कल्ले 50 गुणा 40 सेंमी. अथवा 40 गुणा 30 सेंमी. पर मेड़ अथवा खुड में रोपे जाते हैं। मेड़ अथवा खुड़ों पर रोपाई करने पर पौधों की बढ़वार अच्छी होती है तथा जड़ों में आवश्यक पानी इक्कठा नहीं हो पाता है।

सिंचाई: ग्वार पाठा की फसल में अधिक शुष्कता में भी अच्छी बढ़वार की क्षमता के कारण सिंचाई की कम आवश्यकता होती है। इसकी रोपाई के बाद एक हल्की सिंचाई की आवश्यकता होती है। अधिक पानी व नमी इसकी बढ़वार के लिए ठीक नहीं होती है। उत्तर भारत में गर्मियों में एक या दो सिंचाईयां पौधों की उचित बढ़वार के लिए अच्छी रहती है। अनुसंधानों द्वारा ज्ञात हुआ है कि यदि समय पर सिंचाई की जाये तो पत्तियों में जैल की बनावट (गुणवत्ता व उत्पादन) पर अच्छा प्रभाव पड़ता है।

निराई–गुड़ाई: ग्वार पाठा एक धीरे–धीरे बढ़ने वाली फसल है। इसीलिए पहले वर्ष इसके खेत में काफी संख्या में स्थानीय व वार्षिक खरपतवार उग आते हैं। उनकी रोकथाम के लिए कम से कम 3–4 निराईयां पहले वर्ष तथा 1–2 निराईयां दूसरे वर्ष में आवश्यकतानुसार करनी चाहिए, जिससे पौधों की बढ़वार अच्छी होती है तथा उत्पादन भी अच्छा मिलता है। इसके अलावा फसल की रोपाई के एक महीने पहले एट्राजिन 0.5 कि॰ग्रा॰ सक्रिय अंश (एआई)/हैक्टर का प्रयोग करके भी खरपतवारों की रोकथाम की जा सकती है। अच्छे उत्पादन के लिए पौधों की जड़ों में मिट्टी चढ़ाना अच्छा रहता है। इससे पौधे गिरते नहीं तथा अनावश्यक पानी पौधों के पास एकत्रित नहीं हो पाता और जलनिकास अच्छा रहता है।

खाद एवं उर्वरक: आमतौर पर ग्वार पाठा की फसल के लिए बहुत कम खाद एवं उर्वरकों की आवश्यकता होती है, परन्तु अच्छी पैदावार प्राप्त करने के लिए करीब 5–10 टन गोबर की खाद, कम्पोस्ट का प्रयोग करना चाहिए। उर्वरकों में 50 किलोग्राम नत्रजन, 25 किलोग्राम फॉस्फोरस तथा 25 किलोग्राम पोटाश पहले वर्ष में देना चाहिए। दूसरे वर्ष में करीब 40 किलोग्राम नत्रजन सिंचाई के बाद खड़ी फसल में देना चाहिए।

फसल सुरक्षा: ग्वार पाठा की प्रमुख बीमारियां, पत्तियों का सड़ना व धब्बे वाली बीमारी है जो कि दो फफूंदी *आल्टरनेरिया आल्टरनेवा* एवं *फ्यूजेरियम सोलैनी* द्वारा होती है। इसकी रोकथाम फफूंदीनाशक दवा मैन्कोजेब या क्लोरोथेनोनिल 2.0–2.5 ग्राम/लीटर पानी में डालकर छिड़काव करके की जाती है।

फसल की कटाई : रोपाई के समय के अनुसार करीब 10 से 15 महीने में इसकी पत्तियाँ काटने के लिए तैयार हो जाती है। कटाई बाजार की मांग के अनुसार करनी चाहिए। यदि फसल की उचित देखरेख की जाए तो करीब 4 वर्ष तक इसकी अच्छी उपज प्राप्त कर सकते हैं। प्रत्येक कटाई के बाद फफूंदीनाशक दवाओं (डाइथेन जेड–78) का छिड़काव आवश्यक है।

उपज: ग्वार पाठा की ताजा पत्तियों की करीब 75–85 टन प्रति हैक्टर तथा 15,000 से 18,000 पौध (कल्ले) प्रथम वर्ष में तैयार की जाती है। यह जलवायु तथा फसल की उचित देखरेख पर निर्भर करता है। इसके साथ ही दूसरे व तीसरे वर्ष में उचित देखभाल से अधिक पैदावार प्राप्त की जा सकती है।

लवणीय जल सिंचाई के परिणामः ग्वार पाठा पर लवणीय जल (अच्छा जल, 2, 4, 6 एवं 8 डेसी./मीटर) तथा नत्रजन की मात्रा (0, 50, 100 एवं 150 कि॰ग्रा॰ हैक्टर) के उपचार के साथ कई वर्षों तक प्रयोग किया गया। तालिका 11 से ज्ञात होता है कि पौधों की ऊँचाई (सेंमी.), पौधों का फैलाव (सेंमी.), पत्ती की चौड़ाई (सेंमी.), पत्ती की मोटाई (सेंमी.), कल्लों की संख्या/पौधा, तथा उपज कुंटल/हैक्टर सांख्यिकीय दृष्टि से सार्थक थे तथा सबसे अधिक अच्छे जल द्वारा सिंचाई में पाये गये। इसी प्रकार बिना नुकसान के यही कारक वैद्युत चालकता 2 डेसी./मीटर में अच्छे जल के बराबर थे। इसी प्रकार वैद्युत चालकता 4 एवं 6 डेसी./मीटर में सार्थक रूप से अच्छे जल से कम तथा आपस में समान थे। वैद्युत चालकता 8 डेसी./मीटर में अन्य उपचारों से सार्थक रूप से कम थे। सबसे अधिक शुद्ध आय अच्छे जल उपचार में रुपये 89,167 तथा सबसे कम 8 डेसी./मीटर में रुपये 79,477 प्राप्त हुई (तालिका 12)।

नत्रजन का प्रभाव : उपरोक्त सभी वृद्धिकारक एवं उपज कारक तथा उपज पर नत्रजन की मात्रा का प्रभाव सार्थक था। तालिका 11 के अवलोकन से ज्ञात होता है कि बिना नत्रजन वाले उपचार में ये कारक सार्थक रूप से सबसे कम लेकिन 50 किलोग्राम नत्रजन देने पर सार्थक रूप से नियंत्रित उपचार से अधिक थे। नत्रजन की मात्रा 100 एवं 150 किलोग्राम/हैक्टर आपस में सार्थक रूप से बराबर थे लेकिन नियंत्रण तथा 50 किलोग्राम/हैक्टर से सार्थक रूप से अधिक थे। नियंत्रित उपचार से सबसे कम रुपये 95,630 तथा 150 किलोग्राम/हैक्टर नत्रजन से रुपये 1,15,380 शुद्ध आय प्राप्त हुई (तालिका 12)।

तालिका 11. ग्वार पाठा के वृद्धिकारकों पर विभिन्न उपचारों का प्रभाव

उपचार	पौधे की लम्बाई (सेंमी.)	पौधे का फैलाव (सेंमी.)	पत्तियों की संख्या/पौधा	कटाई योग्य पत्तियाँ/पौधा	पत्तियों का औसत भार (ग्राम)
सिंचाई जल की लवणता (डेसीसीमन्स/मीटर)					
अच्छा जल	44.8	43.7	11.11	4.8	278.9
4	40.2	41.2	9.01	4.3	270.5
6	40.1	40.7	8.98	4.1	265.8
8	39.6	39.6	8.89	4.1	262.6
क्रांतिक अन्तर (0.05)	नहीं	नहीं	1.7	0.2	नहीं
नत्रजन की मात्रा (किलोग्राम/हैक्टर)					
0	39.1	37.5	8.11	3.3	248.7
50	41.5	39.4	9.12	3.6	255.8
100	46.7	44.6	10.17	4.5	275.9
150	47.1	45.8	10.50	4.7	281.8
क्रांतिक अन्तर (0.05)	5.9	4.8	1.7	0.2	22.2

तालिका 12. ग्वार पाठा के वृद्धि कारकों पर विभिन्न उपचारों का प्रभाव

उपचार	पौधे की ऊँचाई (सेंमी.)	पत्ती की चौड़ाई (सेंमी.)	पत्ती की मोटाई (सेंमी.)	उपज (कुंटल / हैक्टर)	कल्लों की संख्या / पौधा	शुद्ध आय (रुपये / हैक्टर)	लाभः लागत अनुपात
सिंचाई जल की लवणता (डेसीसीमन्स / मीटर)							
अच्छा जल	48.6	7.11	0.91	285.1	5.7	89,167	3.60
4	43.3	6.65	0.85	270.2	5.1	82,835	3.35
6	40.2	6.21	0.79	268.5	4.8	82,112	3.32
8	39.8	6.12	0.78	262.3	4.7	79,477	3.22
क्रांतिक अन्तर (0.05)	4.2	0.68	0.11	2.5	0.5	.....	....
नत्रजन की मात्रा (किलोग्राम / हैक्टर)							
0	38.8	5.83	0.81	295.6	5.2	95,630	3.87
50	44.7	6.98	1.09	320.8	6.0	1,06,840	3.77
100	47.3	7.01	1.02	325.7	6.1	1,08,922	3.85
150	48.5	7.25	1.05	345.6	6.3	1,15,380	4.07
क्रांतिक अन्तर (0.05)	4.2	0.68	0.11	2.5	0.5	....	....

प्रक्षेत्र परीक्षण में लवणीय जल सिंचित ग्वार पाठा की फसल

प्याज (*एलियम सिपा*)

शल्क कन्दीय फसलों में प्याज का महत्वपूर्ण स्थान है। इसका प्रयोग कच्चे सलाद के रूप में तथा सब्जियां, अचार, पाउडर एवं फ्लेक्स जैसे उत्पाद बनाने में होता है। प्याज में विटामिन सी, फॉस्फोरस आदि प्रमुख पोष्टिक तत्व प्रचुर मात्रा में पाये जाते हैं। प्याज में चरपराहट एवं तीखापन इसमें उपस्थित गंधक के एक मौलिक एलिल प्रोपाइल डाई सल्फाइड के कारण होता है। गंधक की मात्रा अधिक होने के कारण यह रक्तशुद्धि व रक्तवर्धक का गुण रखता है। गर्मी में लू से बचाता है तथा गुर्दे की बीमारी वाले रोगियों के लिए भी प्याज लाभदायक रहता है।

मृदा एवं जलवायु : प्याज फसल के लिए समशीतोष्ण जलवायु सर्वोत्तम मानी जाती है। प्याज की वृद्धि पर तापमान और प्रकाशकाल का गहरा प्रभाव पड़ता है। कन्दों के अच्छे विकास के लिए फसल पकने से पूर्व लम्बा दिन (13 से 14 घण्टे की प्रकाश अवधि) तथा कुछ अधिक तापमान 35 से 40 डिग्री सेल्सियस अच्छा रहता है। जीवांशयुक्त हल्की दोमट या चिकनी बलुई मिट्टी सबसे अच्छी मानी जाती है। चिकनी मिट्टी में कंदों का समुचित विकास नहीं हो पाता है।

उन्नत प्रजातियाँः प्याज की किस्मों को रंगों के आधार पर तीन वर्गों में वर्गीकृत किया गया है :

- **लाल रंग की किस्में :** पंजाब सलेक्शन, पूसा रेड, पूसा खनार, पूसा माधवी, अर्का निकेतन, एग्रीफाउण्ड डार्क रेड, एग्रीफाउण्ड लाइट रेड, अर्का प्रगति, अर्का बिन्दु एवं हिसार–2
- **पीले रंग की किस्में :** ब्राउन स्पेनिश, फूले स्वर्ण, अर्ली ग्रेनो
- **सफेद रंग की किस्में :** पूसा व्हाइट फ्लेट, पूसा व्हाइट राउण्ड, फूले सफेद, उदयपुर–102 एवं पंजाब–48

पौध तैयार करनाः प्याज के एक हैक्टर क्षेत्र के लिए 500 वर्गमीटर में तैयार की गई नर्सरी की पौध पर्याप्त रहती है। नर्सरी की मिट्टी को अच्छी तरह भुरभुरी बनाकर व उसमें छनी हुई गोबर की खाद मिलाकर क्यारियां तैयार करें। एक हैक्टर में फसल उगाने के लिए 8–10 किलोग्राम बीज पर्याप्त होता है। बुवाई से पूर्व बीजों को थायरम या कैप्टान (2 ग्राम/किलोग्राम बीज) से उपचारित करके बुवाई करनी चाहिए। क्यारियों में कतार से कतार की दूरी 7–8 सेंमी. रखते हुए 2–3 सेंमी. की गहराई में बुवाई करें। बोने के बाद क्यारियों में हल्की सिंचाई कर सूखी घास फूंस से ढंक देते हैं। बीजों का अंकुरण होने पर घास को हटा देते हैं।

खाद एवं उर्वरकः प्याज से अच्छी पैदावार लेने के लिए अच्छी सडी गोबर की खाद 400 से 450 कुंटल प्रति हैक्टर की दर से खेत तैयार करते समय मिला देवें। इसके अतिरिक्त 100 कि॰ग्रा॰ नत्रजन, 50 कि॰ग्रा॰ फॉस्फोरस तथा 100 कि॰ग्रा॰ पोटाश की आवश्यकता होती है। नत्रजन की आधी मात्रा, फॉस्फोरस एवं पोटाश की पूरी मात्रा पौध रोपाई से पहले खेत में अच्छी तरह से मिला दें। नत्रजन की शेष मात्रा की आधी मात्रा छिड़क कर दें।

पौध रोपणः प्याज की पौध लगभग 7–8 सप्ताह में रोपाई के योग्य हो जाती है। रबी में रोपाई का उपयुक्त समय 15 दिसम्बर से 15 जनवरी तक है। रोपाई 15 सेंमी. कतार से कतार तथा 10 सेंमी. पौधे से पौधे की दूरी रखते हुए क्यारियों में करनी चाहिए। फसल को गुलाबी जड़ सड़न रोग से बचाने हेतु पौधों को कार्बेण्डाजिम 2 ग्राम/लीटर पानी के घोल में डुबोकर रोपाई करें।

कन्दों की बुवाई : कन्दों की बुवाई 45 सेंमी. की दूरी पर बनी मेड़ों पर 10 सेंमी. की दूरी पर दोनों तरफ करते हैं। 1.5 से 2.0 सेंमी. व्यास वाले आकार के कंद ही चुनने चाहिए। एक हैक्टर के लिए 10 कुंटल कन्द पर्याप्त रहते हैं।

रोपाईः रोपाई के तुरन्त बाद हल्की सिंचाई करें एवं उसके तीन–चार दिन बाद फिर हल्की सिंचाई अवश्य करें ताकि मिट्टी नम रहे। अच्छे कन्दों के उत्पादन के लिए भूमि में सदैव अनुकूल नमी का होना आवश्यक है। कन्द बनते समय सिंचाई करना अति आवश्यक है। यदि इस समय भूमि में नमी की कमी रह जाती है तो कन्द फट जाते हैं और उपज भी घट जाती है। फसल तैयार होने पर पौधे के शीर्ष पीले पड़कर गिरने लगते हैं। इस समय सिंचाई बन्द कर देनी चाहिए।

निराई–गुड़ाईः प्याज की फसल उगाते समय खरपतवार नियंत्रण आवश्यक है। ऑक्सीफ्लोरेफिन 23.5 ई.सी. 800 मिली. प्रति हैक्टर की दर से पौधरोपण से पहले खेत में छिड़काव करने से खरपतवार नष्ट हो जाते हैं।

पौध नियंत्रण

प्रमुख कीट :

- **थ्रिप्सः** कीट छोटे आकार के होते हैं तथा इनका आक्रमण तापमान की वृद्धि के साथ प्याज पर तीव्रता से बढ़ता है और मार्च महीने में अधिक स्पष्ट दिखाई देता है। ये पत्तियों से रस चूसकर पत्तियां कमजोर कर देते हैं तथा आक्रमण के स्थान पर सफेद चकते दिखाई देते हैं। मैलाथियान 50 ई.सी. 1.5 मिली. प्रति लीटर पानी में मिलाकर छिड़काव करना चाहिए। आवश्यकता होने पर 15 दिन बाद दोबारा छिड़काव करें।
- **प्याज का मैगटः** ये जड़ के पास अण्डे देता है तथा एक सप्ताह में अण्डे से बाहर आ जाता है। नियंत्रण के लिए बोरडेक्स मिश्रण (4:4:50) का छिड़काव करें।

बीमारियाँ

तुलासिताः पत्तियों की निचली सतह पर फफूंद की वृद्धि हो जाती है इसकी रोकथाम के लिए जाइनेब 2 ग्राम/लीटर की दर से छिड़काव करें।

अंगमारीः पत्तियों की सतह पर सफेद धब्बे बन जाते हैं जो बाद में बीज में बैंगनी रंग के हो जाते हैं। जाइनेब 2 ग्राम/लीटर का छिड़काव करें।

खुदाईः कन्दों द्वारा बुवाई करके लगाई प्याज की फसल 90 से 110 दिन में तैयार हो जाती है तथा बीजों द्वारा तैयार की गई फसल 140 से 150 दिन में तैयार होती है। फसल तैयार होने पर पत्तियों के शीर्ष पीले पड़कर सूख जाते हैं इसके 15 दिन बाद खुदाई कर लेनी चाहिए।

सुखानाः खुदाई की हुई गांठों को पत्तियों सहित एक सप्ताह तक सुखाते हैं। धूप तेज होने पर छाया में सुखाते हैं। इसके एक सप्ताह बाद पत्तियों को 2 से 3 सेंमी. ऊपर से काट लेते हैं।

उपजः प्याज की उपज 200 से 350 कुंटल/हैक्टर तक हो जाती है।

लवणीय जल सिंचाई के परिणामः लवणीय जल द्वारा प्याज की खेती में सिंचाई जल के पांच उपचार प्रयोग में लाये गये, जो क्रमशः नहरी जल, वैद्युत चालकता 2, 4, 6 एवं 8 डेसी./मीटर थे। प्याज की प्रजाति नासिक रेड का प्रयोग किया गया था। तालिका 13 के अवलोकन से ज्ञात होता है कि प्याज में नहरी जल एवं वैद्युत चालकता 2 डेसी./मीटर के जल द्वारा सिंचाई करने पर आपस में कोई सार्थक अन्तर किसी भी कारक तथा उपज पर दिखाई नहीं देता है। लेकिन वैद्युत चालकता 4 एवं 6 डेसी./मीटर के जल द्वारा सिंचाई करने पर कारक प्रभावित होते हैं जो परिणाम सार्थक देते हैं। पौधों की ऊँचाई, पत्तियों की संख्या प्रति पौधा, कंद का व्यास, कंद का शुद्ध भार, कंद का आयतन एवं उपज कुंटल/हैक्टर, वैद्युत चालकता 4 एवं 6 डेसी./मीटर में बराबर थे लेकिन नहरी जल से सार्थक रूप से कम थे। तालिका 13 के पुनरीक्षण से ज्ञात होता है कि वैद्युत चालकता 8 डेसी./मी. जल की सिंचाई में ये कारक सबसे कम पाये गये। प्याज की उपज नहरी जल में सबसे अधिक 243.0 कुंटल/हैक्टर तथा वैद्युत चालकता 2 डेसी./मीटर में 234.4 कुंटल/हैक्टर पाई गयी जो आपस में बराबर थी। इसी प्रकार वैद्युत चालकता 4, 6 एवं 8 डेसी./मीटर पर क्रमशः 148.9, 113.6 एवं 80.9 कुंटल/हैक्टर उपज प्राप्त हुई जो सांख्यिकीय दृष्टि से नहरी जल से सार्थक रुप से कम थी।

तालिका 13. लवणीय जल उपचारों का प्याज के वृद्धि कारक एवं उपज पर प्रभाव

उपचार	पौधों की लम्बाई (सेंमी.)	पत्तियों की संख्या/पौधा (सेंमी.)	कन्द का व्यास (सेंमी.)	कंद का शुद्ध भार (ग्राम)	कंद का आयतन (सेंमी.)	कंद की उपज (कुंटल/हैक्टर)
सिंचाई जल की लवणता (डेसीसीमन्स/मीटर)						
नहरी जल	44.9	8.5	8.8	80.2	72.1	243.0
2	44.5	8.4	8.7	75.1	68.9	234.0
4	38.9	7.3	7.6	60.9	51.5	148.9
6	37.3	7.0	6.8	52.6	40.8	113.6
8	29.7	6.0	5.8	42.6	28.6	80.9
क्रांतिक अन्तर (0.05)	4.5	1.3	0.7	8.5	15.1	10.1

लहसुन (*एलियम सेटाइवम*)

लहसुन एलिएसी कुल के अन्तर्गत आता है। हमारे देश में मध्य प्रदेश, गुजरात, उड़ीसा, महाराष्ट्र, उत्तर प्रदेश एवं राजस्थान प्रमुख लहसुन उत्पादक राज्य हैं। देश का 50 प्रतिशत लहसुन केवल मध्य प्रदेश व गुजरात में उगाया जाता है। क्षेत्रफल व उत्पादकता की दृष्टि से मध्य प्रदेश एक अग्रणी राज्य है। लहसुन एक नगदी व औषधीय उपयोगिता के साथ–साथ मसाले की प्रमुख फसल है। इसके निर्यात द्वारा काफी धन अर्जित किया जाता है।

लहसुन छोटी–छोटी कलियों का एक समूह होता है जो सफेद या हल्के गुलाबी रंग की पतली झिल्ली से ढंका होता है और बल्ब का निर्माण करते हैं। इसमें एलीइन नामक रंगहीन व गंधहीन एमीनो अम्ल पाया जाता है। लहसुन का उपयोग सब्जियों एवं मांसाहारी खाने में सुंगन्ध व स्वाद लाने के साथ–साथ अचार, चटनी, केचप, कढ़ी आदि बनाने में किया जाता है। औषधीय महत्व के रूप में यह रक्त में कोलेस्ट्राल की मात्रा को घटाने के साथ–साथ पेट के केंसर के लिए उत्तम होता है। इसके रस का प्रयोग गठिया, क्षय रोग, बांझपन, नपुंसकता एवं कफ आदि को दूर करने में किया जाता है। लहसुन के तेल को कीटनाशी एवं रोगनाशी के रूप में भी उपयोग किया जाता है।

जलवायु एवं भूमि की तैयारीः लहसुन ठंडी एवं नम जलवायु की फसल है। यह पाले को काफी सहन कर लेता है। पौधों की वृद्धि एवं कंद निर्माण के समय ठंडे एवं छोटे दिन तथा शल्क कंदों के परिपक्वता के समय लम्बे दिन एवं शुष्क जलवायु आवश्यक होती है। बुवाई में देरी से पैदावार घट जाती है। 6–7 पीएच की भूमियां उपयुक्त होती है। भारी भूमियों में कंद का अच्छा निर्माण नहीं होता है। खेती करने के लिए 2–3 जुताई करके खेत को भुरभुरा बना लेना चाहिए।

किस्में: लहसुन दो प्रकार का होता है। सफेद व लाल। लाल लहसुन का प्रयोग दवाओं में किया जाता है। सफेद लहसुन की प्रमुख प्रजातियां है, यमुना सफेद (जी–1), यमुना सफेद–2 (जी–50), यमुना सफेद–3 (जी–282), यमुना सफेद–4 (जी–323), एग्रीफाउण्ड व्हाइट (जी–417), एग्रीफाउण्ड पार्वती (जी–313), गोदावरी, श्वेत, एस.जी. 6, पूसा–10, इत्यादि।

बुवाई का समयः मैदानी क्षेत्रों में बुवाई का उपयुक्त समय अक्टूबर–नवम्बर एवं पहाड़ी क्षेत्रों में मार्च से अप्रैल होता है।

बीज एवं बुवाईः लहसुन की बुवाई के लिए स्वस्थ एवं बड़े आकार की शल्ककंदी (कलियों) का उपयोग करना चाहिए। बीज में 5–6 कुंटल/हैक्टर लहसुन की आवश्यकता होती है। शल्ककंद में मध्य में पाई जाने वाली सीधी कलियों का प्रयोग बुवाई में नहीं करना चाहिए। बुवाई से पूर्व कलियों को थायरम + कार्बेण्डाजिम 3 ग्राम दवा के सम्मिश्रण या मैन्कोजेब के 2–3 ग्राम प्रति लीटर पानी के घोल से उपचारित करना चाहिए। लहसुन की बुवाई कूड़ों में, छिटकवां या डिबलिंग विधि से की जाती है। कलियों को 5–7 सेंमी. गहराई में गाड़कर ऊपर से हल्की मिट्टी से दबा देते हैं। कलियों से कलियों की दूरी 8 सेंमी. तथा कतार से कतार की दूरी 15 सेंमी. रखते हैं।

खाद एवं उर्वरकः खाद एवं उर्वरक की मात्रा भूमि की उर्वरकता पर निर्भर करती है। सामान्य तौर पर प्रति हैक्टर 20–25 टन पकी गोबर या कम्पोस्ट या 5–8 टन वर्मीकम्पोस्ट, 100

किलोग्राम नत्रजन, 50 किलोग्राम फॉस्फोरस तथा 50 किलोग्राम पोटाश की आवश्यकता होती है। गोबर की खाद, डी.ए.पी. एवं पोटाश की पूरी मात्रा तथा नत्रजन की आधी मात्रा बुवाई के समय मिट्टी में मिला देते हैं। शेष नत्रजन की मात्रा खड़ी फसल में 30–40 दिन बाद छिड़क कर डाल देते हैं। सूक्ष्मपोषक तत्वों का प्रयोग उपज बढ़ाने में सहायक होता है। बुवाई के 30–60 दिन बाद मैंगनीज सल्फेट (0.1 प्रतिशत) या बोरिक अम्ल (0.02 प्रतिशत) या जिंक सल्फेट (0.02 प्रतिशत) घोल का छिड़काव उपज बढ़ाने में सहायक होता है।

सिंचाई एवं जलनिकासः बुवाई के तत्काल बाद हल्की सिंचाई कर देनी चाहिए। शेष अन्तराल में वानस्पतिक वृद्धि के समय 7–8 दिन के अन्तराल तथा फसल परिपक्वता के समय 10–15 दिन के अन्तराल पर सिंचाई करते रहना चाहिए। सिंचाई हमेशा हल्की करनी चाहिए जिससे खेत में पानी न भर सके। सिंचाई का अन्तराल बढ़ाने पर लहसुन की कलियां बिखर जाती है।

निराई–गुड़ाईः जड़ों में उचित वायु संचार हेतु खुरपी, हैन्ड टी या कुदाली द्वारा 25–30 दिन बाद प्रथम व 45–50 दिन बाद दूसरी निराई आवश्यक है।

खरपतवार नियंत्रणः खरपतवारों को नियंत्रित करने के लिए 0.1 कि॰ग्रा॰ फ्लूक्लोरेलिन सक्रिय तत्व या पेंडीमिथालिन 0.1 किलोग्राम सक्रिय तत्व बुवाई बाद अंकुरण से पूर्ण 500 लीटर पानी में घोलकर प्रति हैक्टर छिड़काव करना चाहिए।

प्रमुख कीट

थ्रिप्स : यह पीले रंग के छोटे कीट होते हैं जो पत्तियों का रस चूसते हैं। पत्तियाँ चितकबरी व भूरी होकर सूख कर गिर जाती है। नियंत्रण के लिए 0.1 प्रतिशत मेलाथियान या डाइमेथोएट + 0.1 प्रतिशत सेडोविट का 15 दिन के अन्तराल पर छिड़काव करना चाहिए।

शीर्ष छेदक कीट : इस कीट का लार्वा पत्तियों के आधार को खाता हुआ शल्ककंदों के अन्दर प्रवेश कर सड़न पैदा कर फसल को नुकसान पहुंचाता है। मैलाथियान या डाइमेथोएट + थायोविट 0.1 प्रतिशत 500–700 लीटर पानी में घोलकर 15 दिन के अन्तराल से छिड़काव करें।

प्रमुख रोग

झुलसा रोगः रोग में पत्तियों पर हल्के नारंगी रंग के धब्बे बनते हैं। नियंत्रण के लिए मैन्कोजेब (0.25 प्रतिशत) कवकनाशी दवा 500–700 लीटर पानी में घोलकर 15 दिन के अन्तराल पर छिड़काव करें।

तना गलनः इसके प्रभाव से जड़ों पर गुलाबी रंग आ जाता है। पत्तियाँ तथा मध्य भाग मुरझाने लगता है। जड़ तथा शल्ककंद सड़ने लगता है। रोगरोधी किस्म की बुवाई करें। थायरम + कार्बेण्डाजिम 3 ग्राम मिश्रण से बीजोपचार करें।

खुदाई : किस्मों के अनुसार लहसुन की फसल 150–180 दिन में तैयार हो जाती है। जब पत्तियां पीली पड़कर मुरझाने लगे तब सावधानीपूर्वक खुदाई कर लेनी चाहिए। कंदों को पत्तियों सहित छाया में सुखाना चाहिए।

तालिका 14. लवणीय जल उपचारों का लहसुन के वृद्धि कारक एवं उपज पर प्रभाव

उपचार	पौधे की ऊँचाई (सेंमी.)	पत्तियों की संख्या/पौधा	बल्ब का भार (ग्राम)	क्लोव की संख्या/बल्ब	बल्ब की उपज (कुंटल/हैक्टर)	संबंधित उपज (प्रतिशत)	शुद्ध आय (रुपये/हैक्टर)	लाभः लागत अनुपात
सिंचाई जल की लवणता (डेसीसीमन्स/मीटर)								
नहरी जल	57.1	7.8	17.9	28.9	114.1	100	48,340	2.28
2	56.0	7.9	17.2	28.0	106.1	93	42,610	2.00
4	47.8	7.8	14.9	26.0	96.5	85	36,250	1.71
6	45.2	7.1	12.5	22.5	78.0	68	30,750	1.45
8	37.2	7.0	11.0	19.5	64.2	56	26,150	1.23
क्रांतिक अन्तर (0.05)	6.4	0.1	2.5	2.5	8.1	...	...	...

लवणीय सिंचाई जल के परिणामः लवणीय जल का लहसुन की फसल पर कई वर्ष तक परीक्षण किया गया। तालिका 14 के अवलोकन से स्पष्ट होता है कि लहसुन के उपज कारक जैसे पौधे की ऊँचाई (सेंमी.), पत्तियों की संख्या/पौधा, बल्ब का भार (ग्राम), कलियों की संख्या/बल्ब इत्यादि सार्थक रूप से सबसे अधिक नहरी जल सिंचाई उपचार व साथ ही सबसे कम वैद्युत चालकता 8 डेसी./मीटर उपचार में पाये गये। तालिका 14 से स्पष्ट होता है कि लहसुन की उपज कुंटल/हैक्टर सबसे अधिक सार्थक रूप से नहरी जल सिंचाई उपचार में (114.1 कुंटल/हैक्टर) थी लेकिन यह वैद्युत चालकता 2 डेसी./मीटर के समान थी। इसी प्रकार सार्थक रूप से सबसे कम उपज वैद्युत चालकता 8 डेसी./मीटर में 64.2 कुंटल/हैक्टर सार्थक रूप प्राप्त हुई। लहसुन की लवणीय जल द्वारा सिंचाई में शुद्ध आय रुपये 48340, नहरी जल सिंचाई उपचार में तथा सबसे कम रुपये 26150, वैद्युत चालकता 8 डेसी./मीटर सिंचाई जल से प्राप्त हुई। परिणामों के आधार पर हम कह सकते हैं कि लहसुन की खेती 8 डेसी./मीटर तक लवणीय जल सिंचाई द्वारा बिना जोखिम के की जा सकती है।

लवणीय जल सिंचाई में लहसुन की फसल

उपसंहार

अपारंपरिक फसलों के अध्ययन से ज्ञात होता है कि लवणीय जल वाले क्षेत्रों में जहाँ भूजल खारा है उसमें किसान सभी फसलें नहीं उगा सकते वहाँ बहुत सी औषधीय, तेल, फूल, और सब्जी वाली फसलें उगाकर पैदावार प्राप्त की जा सकती है। परिणामों को देखा जाये तो तुलसी व ईसबगोल को 6 डेसी./मीटर लवणता तक सफलतापूर्वक उगाया जा सकता है। गैंदा के पुष्पों की पैदावार 6 डेसी./मीटर लवणीय जल सिंचाई द्वारा अच्छे जल के लगभग बराबर प्राप्त हो जाती है। मेथी व तिल को 6 डेसी./मीटर लवणीय जल द्वारा सिंचाई करके बिना नुकसान के उगाया जा सकता है। सौंफ को 6 डेसी./मीटर के लवणीय जल में सफलतापूर्वक तथा 8 डेसी./मीटर लवणीय जल में कुछ कम उपज के साथ उगाया जा सकता है। गुलाब के फूलों को 8 डेसी./मीटर तक के लवणीय जल में उगाया जा सकता है। ग्वार पाठा को ऐसी भूमियों जिनमें किसी प्रकार की खेती नहीं की जा सकती, वहाँ वैद्युत चालकता 8 डेसी./मीटर तक के लवणीय सिंचाई जल में सफलतापूर्वक उगाया जा सकता है। प्याज तथा लहसुन की फसल को 4 डेसी./मीटर के पानी में अच्छे जल द्वारा उगाई फसल के बराबर पैदावार ली जा सकती है। इन अपारंपरिक फसलों को 8 डेसी./मीटर लवणता के जल की सिंचाई द्वारा उगाया जा सकता है। इस प्रकार कहा जा सकता है कि वैद्युत चालकता 4 डेसी./मीटर लवणता तक पैदावार में सार्थक कमी आये बिना उपरोक्त फसलों को सफलतापूर्वक उगाया जा सकता है। कुछ फसलों को 6 डेसी./मीटर लवणता तक भी पैदावार में कमी लाये बिना उगाकर अच्छी उपज के साथ आमदनी प्राप्त की जा सकती है।

तकनीकी संस्तुतियाँ

लवणीय जल उपयोग द्वारा सिंचाई के कई वर्षों तक अपारंपरिक फसलों पर किए गए अनुसंधानों के आधार पर निम्नलिखित संस्तुतियों की सिफारिश की जाती है :

1. लवणीय जल सिंचाई वाले क्षेत्रों में बुवाई पूर्व सिंचाई (पलेवा) अच्छे जल (यदि हो) से करें ताकि फसलों का अंकुरण अच्छा हो सके। उसके बाद खारे जल द्वारा सिंचाई कर सकते हैं। इससे भरपूर पैदावार ली जा सकती है।
2. उर्वरकों का प्रयोग संतुलित मात्रा में ही करें ताकि उपज पर अनुकूल प्रभाव पड़े।
3. लवणीय जल सिंचाई में जल की मात्रा आवश्यकतानुसार ही रखें ताकि मृदा में लवणों की मात्रा को नियंत्रित रखा जा सके।
4. बुवाई के समय संस्तुत बीज दर से थोड़े ज्यादा बीज की मात्रा का प्रयोग करें।
5. फसलों में सामयिक सिंचाई का उपयोग करें, यह बहुत फायदेमंद है।
6. पौधों को कीट व रोगों से बचाने के लिए फसलों के अनुसार कीटनाशी दवाओं का समय–समय पर प्रयोग करें।
7. लवणीय जल द्वारा सिंचित क्षेत्रों में अपारंपरिक फसलें उगाकर अच्छी आमदनी प्राप्त कर आजीविका सुरक्षा की जा सकती है।

****

अधिक जानकारी के लिए संपर्क करें:

प्रभारी अधिकारी

अखिल भारतीय समन्वित अनुसंधान परियोजना

''लवणग्रस्त मृदाओं का प्रबंध एवं खारे जल का कृषि में उपयोग''

राजा बलवंत सिंह महाविद्यालय, बिचपुरी, आगरा–283105 (उत्तर प्रदेश)

ईमेल: **aicrp.salinity@gmail.com**